मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

फ़साद का ज़िम्मेदार कौन ?

''दुनिया के फ़साद का ज़िम्मेदार धर्म नहीं है। दुनिया का फ़साद यह नहीं है कि धर्म धर्म से लड़ रहा है। धर्म के धर्म से लड़ने का दौर समाप्त हो चुका, सदियों पहले समाप्त हो चुका। आज बेचारे धर्म को कौन अवसर प्रदान करता है कि वह मैदान में आये। आज अधर्मी मनुष्य अधर्मी मनुष्य से लड़ रहा है। आज ग़रज़ ग़रज़ से लड़ रही है। आज हवस हवस से टकरा रही है। मंत्रालय मंत्रालय से लड़ रहा है। आज पार्टी पार्टी से लड़ रही है।''

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

AUG 17

₹ 10/-

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

देश की उन्नति व स्थायित्व का आधार

"किसी देश की उन्नति एवं स्थायित्व तथा किसी समाज की सुरक्षा और उसमें सम्मानित जीवन व्यतीत करने के बहुत से उदगम् स्रोत, बहुत सी शर्तें एवं बहुत सी पहचान हैं। जैसे: कोई देश बड़ी सैन्य शक्ति का मालिक है। किसी देश के पास जीवन के बड़े-बड़े साधन हैं। किसी के पास खेती इत्यादि की दौलत का बहुत बड़ा स्रोत है। किसी देश में बहुत से विश्वविद्यालय हैं। किसी देश के संबंध बड़ी सलतनतो और बड़े देशों से बहुत ही अच्छे हैं और उस देश को उन पर पूरा विश्वास है। किसी देश में क्षमतावान मनु"यों का भण्डार है, वहां मानवीय क्षमता बहुत पायी जाती है। वहां के लोग शारीरिक रूप से बहुत सक्षम हैं। यह सारी चीज़े किसी देश की ताक़त व उसके स्थायित्व और किसी देश की इज़्ज़त और उसके सम्मान की पहचान समझी जाती है। मैं इनका इनकार नहीं करता, लेकिन अगर मेरे सामने किसी देश की बड़ाई, किसी देश का स्थायित्व और किसी समाज के सम्मान के साथ जीवन बिताने की चर्चा हो जाए और किसी देश की तारीफ़ की जारी हो तो मैं एक सवाल करूंगा। वह यह कि मुझे यह बताइये कि वहां के स्कूलों और कालिजों से लेकर यूनिवर्सिटयों के छात्र तक नई नस्ल के शिक्षित नवजवानों में किसी दर्जे ज़िम्मेदारी का एहसास पाया जाता है। उनमें अपने मन को वश में करने की कितनी ताक़त है। उनमें अपनी भावनाओं को नियन्त्रण में रखने की क्षमता है। उनमें किसी देश की सही व्यवस्था और क़ानून के सम्मान की कितनी आदत है। और उनमें मशहूर होने का एहसास कितना पाया जाता है?** मैं इतिहास के एक छात्र की हैसियत से और इतिहास की सीमाओं से निकलकर ज़िन्दा समाज में चलने-फिरने और लोगों के सामने उठने-बैठने वाले एक इन्सान की हैसियत से भी इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि, मैं केवल किताबों के पन्नों और पिछले इतिहास पर उसका आधार नहीं रखता।

आंकड़ों ने हमारे इस ज़माने में जो महत्व प्राप्त कर लिया है। उसके लिये जो बड़ी-बड़ी संस्थाएं बनायी गयी हैं, उनके लिये जो मानवीय क्षमताएं ख़र्च हो रही हैं, उसके महत्व को कम किये बिना यह कहूंगा कि मेरे निकट किसी देश की सुरक्षा औरउसके मान व सम्मान को जांचने का स्तर नहीं है। जो पुख़्ता नस्ल इस समय मौजूद है या जिसने बुढ़ापे की मंज़िल में क़दम रखा है, वह बेहतर से बेहतर है। इसमें से हर व्यक्ति हमारी पुरानी जीवनी की इस्तलाह में वली है और इल्मी इस्तलाह में अल्लामा है। और दूसरे शब्दों में उनकी जो प्रशंसा कीजिए, यह बिल्कुल काफ़ी नहीं है। इसलिए कि यह नस्ल जल्द ख़त्म हो जाएगी। अल्लाह उसकी उम्र में बरकत दे, लेकिन अल्लाह का क़ानून अपना काम कर रहा है। उसमें न पैग़म्बरों का मतभेद है न वलियों का मतभेद है और न आलिमों में मतभेद है। यह जीवन व मृत्यु का क़ानून सब पर हावी है। यह बात इत्मिनान के लिये काफ़ी नहीं है किसी देश की अधेड़ या बूढ़ी नस्ल बड़ी पाकबाज़ है, बड़ी ज़िन्दादिल है, बड़ी क्षमतावान है, देखने की बात यह है कि जिस नस्ल को इस नस्ल की जगह लेनी है, देश की बाग़डोर संभालनी है और जिससे देश का भाग्य जुड़ा है, जिससे इस देश के इतिहास का क्रम बना रहेगा, उस नस्ल का व्यवहारिक स्तर क्या है? कितना उसे अपनी इच्छाओं पर नियन्त्रण है?उसके अन्दर बुराइयों से बचने की कितनी ताक़त है और कितना संघर्ष कर सकती है?

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह0)

بسم الله الرحمن الرحيم

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:०८ अगस्त २०१७ ई० वर्ष:९

संरक्षक

हज़रत मौलाना
सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी
(अध्यक्ष - दारे अरफ़ात)

निरीक्षक

मौ० वाज़ेह रशीद हसनी नदवी
जनरल सेकेरेट्री- दारे अरफ़ात

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
अब्दुस्सुबहान नाख़ुदा नदवी
महमूद हसन हसनी नदवी

सह सम्पादक

मो० नफ़ीस ख़ाँ नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

मुद्रक

मो० हसन नदवी

इस अंक में:

स्वतन्त्रता दिवस का संदेश.....२
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

शिर्क की बुराई.....३
हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

इल्म के आदाब.....५
मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी रह०

एकेश्वरवाद क्या है?.....८
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

परेशानियों का मुक़ाबला कैसे करें.....९
मौलाना असरारुल हक़ क़ासमी

सज्दा सहू के एहकाम व मसाएल.....११
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

क़तर पर निशाना क्यों?.....१३
डाक्टर ग़ितरीफ़ शहबाज़ नदवी

मुसलमानों की कार्यप्रणाली.....१५
मौलाना अज़ीज़ुल हसन सिद्दीक़ी

अल्लाह की मुहब्बत.....१७
मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

वर्तमान समय में मुसलमान क्या करें?.....१८
मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

हज़रत अबू बसीर का नमूना.....१९
अबुल अब्बास ख़ाँ

E-Mail: markazulimam@gmail.com

www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001

प्रति अंक 10रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला ख़ाँ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू०

सम्पादकीय

स्वतन्त्रता दिवस का संदेश

● बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

15 अगस्त 1947 को जिन लम्बी कुर्बानियों के बाद देश आज़ाद हुआ था, आज वह दोबारा गुलामी की ज़ंजीर पहनने के लिये तैयार है और वह गुलामी ज़मीर की गुलामी है, जिससे बदतर कोई गुलामी नहीं हो सकती, और जिसका नतीजा पूरी तरह से गुलामी की शक्ल में ज़ाहिर होता है।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के नाम से कलकत्ता में अंग्रेज़ों ने सात समन्दर पार से आकर क़दम जमाए थे और उस समय के आज़ाद संयुक्त भारत के शासकों ने उन पर विश्वास किया था। किन्तु यही अति विश्वास उनको ले डूबा। आज वही रूप अपनाया जा रहा है। इस्राईल पर हद से ज़्यादा भरोसा एक ऐसे समुदाय पर भरोसा करने के बराबर है जिसने हमेशा मानवता का ख़ून चूसा है और बड़ी–बड़ी ताक़तों को उन्होंने अपनी ख़ुफ़िया साज़िशों से अपना गुलाम बनाया है। ख़ूबसूरत शब्दों के पीछे जो वास्तविकताएं छिपी हुई हैं उनका अनुमान हर वह व्यक्ति लगा सकता है जिसने समुदायों व क़ौमों के इतिहास का गहराई से अध्ययन किया हो।

अरफ़ात किरण के पन्नों से हमेशा देश के नेतृत्व को आगाह करने का प्रयास किया गया है। ज़ाहिर है कि नक़्क़ारख़ाने में तूती की सदा ही क्या है। किन्तु एक देशप्रेमी की ज़िम्मेदारी है कि वह देशवासियों को उन ख़तरों से आगाह करे जो देश को घेरते चले जा रहे हैं। अंग्रेज़ी साम्राज्य के बाद ही देश के शुभचिन्तकों ने आज़ादी का बिगुल बजाया था। 1857 ई0 में उनको इसकी बड़ी क़ीमत चुकानी पड़ी थी। हज़ारो उलमा (मुस्लिम विद्वान) शहीद किये गये थे और 1947 ई0 तक लाखों लोग आज़ादी की भेंट चढ़ाए गये। 26 जनवरी को देश में गणतन्त्र दिवस इसीलिये मनाया जाता है कि देश की बुनियाद लोकतन्त्र पर रखी गयी और ऐसा संविधान तैयार किया गया जिसमें सबके अधिकारों का ध्यान रखा गया।

अफ़सोस की बात है कि कुछ लोगों ने अपने हितों की ख़ातिर देशहित का सौदा शुरू कर दिया। देश की बुनियादें तीन चीज़ों पर रखी गयी थीं:

1. लोकतन्त्र (Democracy) 2. धर्मनिरपेक्षता (Secularism) 3. अहिंसा (Non-Violence)

कुछ अपना हित साधने वाले लोगों ने देश को बांटने का काम शुरू कर दिया है। अहिंसा का मार्ग अपना लिया है और देश के इन तीनों आधारों को कमज़ोर करना आरम्भ कर दिया जिस पर एक ताक़तवर और मार्गदर्शक देश का आधार रखा गया था और जिसमें क़ौमी एकता को बुनियादी हैसियत दी गयी थी।

पूरे देश में इस समय जो हालात हैं उससे देश का ढांचा धीरे–धीरे कमज़ोर हो रहा है और अफ़सोस की बात है कि इतने लम्बे–चौड़े देश में खुलकर इस बात को बयान करने वाले भी नहीं। इस समय सारी ताक़त पैसे की है। हर चीज़ बेची जा सकती है और हर चीज़ ख़रीदी जा सकती है।

समस्या न हिन्दू की है न मुसलमान की, न किसी और अल्पसंख्यक की। समस्या सच्ची मानवता की है। वास्तविकता पर आधारित उन नियमों की है जिनसे मानवता का भ्रम स्थापित है। जिससे एक ताक़तवर समाज वुजूद में आता है। जिससे इन्सान को अपनी इन्सानियत पर नाज़ होता है। एक कमज़ोर भी सर उठाकर चलता है और वह समझता है कि उसके पीछे इन्सानियत की ताक़त है। जिसमें न अमीर व ग़रीब का अन्तर है, न कमज़ोर व ताक़तवर का, उसकी मानवता उसकी रक्षा के लिये पर्याप्त है।

इस समय की सबसे बड़ी समस्या यही है कि सच्ची बात कहने वाले न रहे। बुराइयां तो होती हैं, लेकिन अगर इन बुराइयों को बुरा कहने वाले ख़त्म हो जाएंगे तो यह समाज का सबसे बड़ा नासूर है।

.....(शेष पेज 16 पर)

शिर्क की बुराई

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

मूर्ति पूजा से पहले लोग एक ही धर्म के मानने वाले थे। हज़रत आदम (अलैहिस्सलाम) ने जो धर्म बतलाया था, वही धर्म सबका धर्म था। सब उसी के मानने वाले थे। लेकिन जब हज़रत आदम (अलैहिस्सलाम) की औलादें बढ़ती रहीं और बेटों के बेटे होते रहे, पोते पर–पोते होते रहे और विभिन्न प्रकार की परिस्थितियां सामने आती रहीं तो वहम (भ्रम) ने उनको बदतरीज मूर्तिपूजा में लगा दिया। वे लोग हज़रत आदम (अलैहिस्सलाम) को नबी और बड़ा बुज़ुर्ग समझते थे, अतः यह समझा कि उनको याद कर लेना और उनका नाम ले लेने से हमारा फ़ायदा ही होगा। इससे अल्लाह तआला खुश होगा। तो यहां से बात शुरू की। इसके बाद "अल्लाह खुश होगा" यह बात निकल गई और अब यह बाक़ी है कि "हमारा काम चल जाएगा और हमारा फ़ायदा हो जाएगा"। इसलिए इसके बाद जो नेक लोग गुज़रे उनके मानने वाले भी उसी तरह उनको पवित्र मानने लगे और पवित्र मानते मानते उनकी इबादत करने लगे और इस इबादत को ज़रूरी समझने लगे। फिर यह हुआ कि उनकी इबादत करने के लिए कोई निशानी होनी चाहिए, ख़ाली हवा में कैसे इबादत करें। तो एक चीज़ पहचान के तौर पर सामने रखी गयी और धीरे–धीरे नौबत यहां तक पहुंची कि सबकुछ उसी पहचान को समझने लगे और खुदा को मानने के साथ–साथ यह भी समझने लगे कि खुदा तो सबसे बड़ा है लेकिन अब वह कहां यह कष्ट करेगा कि हमारी बात सुने और हमारी मदद करे। हमें तो जैसे दुनिया में होता है कि बादशाह है, बादशाह हर काम नहीं देखता और नहीं करता, बल्कि जो उनके कर्मचारी होते हैं उनसे काम चलता है। लोग सोचते हैं कि अस्ल बादशाह के पास जाने की क्या ज़रूरत है, वह कहां हमारे चक्कर में पड़ेगा। इससे बेहतर है कि उनसे जो आदमी मुक़र्रर किये हैं, उन्हीं से अपना काम चला लें, चुनान्चे जब यही चीज़ लोगों ने दीन के सिलसिले में माल ली कि अल्लाह तआला की ज़ात तो यक़ीनन है, लेकिन हमें अल्लाह से नहीं लेना है, बल्कि हमें तो उन्हीं से मिलेगा जो अल्लाह के पसंदीदा हैं। उनके इसी ख़्याल की तरजुमानी कुरआन इस तरह करता है:

"और जिन लोगों ने उसके अलावा कारसाज़ बना रखे हैं (और कहते हैं) कि हम उनकी बन्दगी इसलिए करते हैं ताकि यह हमें अल्लाह से मरतबे में क़रीब कर दें।" (सूरह ज़ुमरः 3)

गोया मुश्रिकीन उन बुतों को अस्ल खुदा नहीं मानते, मगर उनकी इबादत इसलिए करते हैं कि यह उनको अल्लाह से क़रीब कर देंगे। यह उनका काम कर देंगे तो उनका सम्मान व इबादत करना इसलिए है कि वे उनको उस खुदा तक पहुंचा देंगे और खुश होकर अल्लाह से उनकी सिफ़ारिश करवा देंगे, प्रत्यक्ष रूप से वे उससे नहीं मांग सकते, जबकि अल्लाह तआला का हुक्म यह है कि हम वास्ते न अख़्तियार करें। इस्लाम में वास्ते नहीं रखे गये। प्रत्यक्ष रूप से अल्लाह से मांगने का हुक्म है, इस सिलसिले में किसी के सामने हाथ फैलाने से मना किया गया है। बार–बार यह कहा गया है कि हर इन्सान अल्लाह तआला से सीधे तौर पर मांगे, इसलिए कि अल्लाह तआला ही हर चीज़ देता है। हर चीज़ अल्लाह ही करता है और अल्लाह तआला को ऐसा बादशाह नहीं समझना चाहिए जिसने सेवक तय कर दिये हैं और काम करने के लिए अपना एक स्टाफ़ बना दिया है और खुद तख़्त–ए–सल्तनत पर बैठा हुआ है, नहीं, बल्कि अल्लाह हर काम को देख रहा है। कुरआन मजीद में कई जगह यह बात आयी कि कोई चीज़ भी चाहे छोटी या बड़ी हो वह हमारे करने से होती है और एक–एक हिस्सा जो है उसको हम देखते हैं और जानते हैं। हर काम हमारी ही इजाज़त से हो रहा है। कोई चीज़ खुद से कुछ नहीं कर रही है। हमारे करने से सबकुछ हो रहा है। जैसे दवाएं जो असर डालती हैं, वह इसलिए नहीं कि खुद दवाओं में कुछ असर है, बल्कि हक़ीक़त यह है कि उनको अल्लाह ने असर डालने का ज़रिया बना दिया है। दवा अल्लाह के कहने से असर करती है। उसके अन्दर खुद से असर करने की योग्यता नहीं है। यही वह बिन्दु है जहां से तौहीद (एकेश्वरवाद) और शिर्क (बहुदेववाद) का फ़र्क़ हो जाता है। आदमी यह समझता है कि अल्लाह क्या करेगा। वह तो बहुत बड़ा है। हमारा काम तो यह चीज़ें करती हैं। इन चीज़ों में यह योग्यता है। अल्लाह फ़रमाता है कि इन चीज़ों में स्वयं से यह योग्यता नहीं है, बल्कि उनके अन्दर यह योग्यता हमने उत्पन्न है, तब यह काम करती हैं।

मुश्रिकीन (बहुदेववादियों) का हाल देखें कि जब उनसे

माबूद (उपासक) बनाने का कोई उसूल पूछा जाए तो वे खुद नहीं बता सकेंगे कि माबूद बनाने का क्या उसूल है। यही वजह है कि कोई किसी चीज़ को माबूद बनाए हुए है। कोई किसी चीज़ को और किसी को माबूद बनाने का मतलब यह है कि यह हमको वह चीज़ दिला सकते हैं। या हमारा वह काम कर सकते हैं, जो इन्सान नहीं कर सकता?और इसी तरह लकड़ी कैसे कर सकती है, दरख़्त और जानवर कैसे कर सकते हैं, जिन उपासकों को मनुष्य ने स्वयं उपासक बना रखा है, उनको देखें तो उनका ज़रा भी अक़्ल से संबंध पता नहीं चलता। इसलिए कि वे चीज़ें ऐसी हैं कि सब देख रहे हैं कि वे खुद कुछ नहीं हैं, बल्कि इन्सान उनको जिस तरह चाहे इस्तेमाल करे। चाहे तो उठाकर पटख़ दे, तोड़ दे या जो चाहे करे। वे इससे इनकार नहीं कर सकती। तो एक तरफ़ इन्सान उस पर पूरी तरह हावी है, वह जो चाहे उसके साथ मामला करे और दूसरी तरफ़ मुश्रिकीन यह भी समझते हैं कि वह हम पर हावी है और हमारे सारे काम अंजाम देने पर क़ादिर (समर्थ) है। यह हमारी मुसीबत को टाल सकते हैं, परेशानी को दूर कर सकते हैं, हमें कामयाब बना सकते हैं, लेकिन सोचने की बात यह है कि यह दोनों बातें कैसे जोड़ खा सकती हैं। इन बातों का अक़्ल से बिल्कुल संबंध नहीं है। मगर अफ़सोस कि इन्सानों ने उनको न समझा और बुत परस्ती में डूबते चले गये। अतः यही बुत परस्ती (मूर्तिपूजा) अरबों में अंधाधुंध आयी। बुतपरस्ती उनके यहां इस हद तक पहुंच गयी कि वह आख़िर में बहुत बढ़ गयी थी, क्योंकि बेअक़्ली की काई हद नहीं होती, अक़्ल की तो फिर भी हद होती है, लेकिन बेअक़्ली के बाद कोई हद नहीं, इन्सान जो चाहे करे।

मालूम होना चाहिये कि अल्लाह को यह बात बहुत ज़्यादा नापसंद है कि उसके साथ किसी को शरीक किया जाए, क्योंकि सबकुछ उसी का दिया हुआ है। ज़र्रा–ज़र्रा उसी का बनाया हुआ है और उसने इन्सानों के फ़ायदे के लिये सारी चीज़ों को पैदा किया है। ज़मीन में ग़ल्ला और फ़लों के पैदा होने की सलाहियत रखी है। जानवरों को पैदा किया। चांद व सूरज की गर्दिश बनायी और उन सबका मक़सद यही बताया कि यह सब चीज़ें इन्सानों के फ़ायदे के लिए हैं। अर्थात यह चीज़ें इन्सानों पर अल्लाह के इनाम हैं। हम इन्सानों पर यह उसका करम है। लेकिन हम उसको भूलकर ऐसी चीज़ अपना लेते हैं कि जिनके बारे में साफ़ नज़र आता है कि वे कुछ नहीं कर सकतीं। लेकिन हम उनको समझते हैं कि हमको सबकुछ उन्हीं से मिल रहा है। हमको सारा फ़ायदा उन्हीं से हासिल हो रहा है। लिहाज़ा उन्हीं से मांगने से हमको हासिल होगा। तो अल्लाह को ज़ाहिर है कि यह बात हरगिज़ पसंद नहीं हो सकती?क्योंकि यह खुला हुआ शिर्क है और अल्लाह तआला को सबसे ज़्यादा शिर्क ही नापसंद है। शिर्क में पड़ने के बाद इन्सान की हालत यह होती है कि वह उसके बाद दुनिया की सारी बेकार की चीज़ों में पड़ जाता है। हर तरह के गुनाह और बुराइयों को अपना लेता है, जिसकी एक बड़ी वजह मनमानी है जो उसको हर बुराई के करने पर आमादा कर देती है इसलिए कि इसके सामने कोई तालीम नहीं होती। वह जिसकी इबादत करता है, वह उसको न कुछ बता सकता है, न सिखा सकता है, न ध्यान दिला सकता है। उसके नज़दीक बस यह बात है कि पूजा कर ली जाए और उसके बाद जो किया जाए सब जायज़ है।

अल्लाह तआला हर–एक की मानसिकता से पूरी तरह परिचित है। ज़ाहिर है कि हर कोई उसकी मख़लूक़ (प्राणिवर्ग) में से है। हर एक के अन्दर जो तबियतें और फ़ितरतें और जो ख़ासियतें हैं, वे सब अल्लाह तआला की ही बनायी हुई हैं। जिसने अलग–अलग विशेषताएं बनाकर इन्सानों में डाली हैं और दूसरे प्राणियों पर इन्सानों को श्रेष्ठता प्रदान की है और बहुत सी ऐसी ख़ासियतें भी अता की हैं, जो दूसरे प्राणियों को मिलने के अलावा जिन्नात भी उससे महरूम हैं। उनकी ख़ासियतों से इन्सानों की ख़ासियतें कुछ बढ़ी हुई हैं, जिसका इल्म कुरआन मजीद की इस आयत से होता है, अल्लाह का इरशाद है: "और यक़ीनन हमने आदम की औलाद को इज़्ज़त बख़्शी।"

यानि इन्सान को सबसे इज़्ज़तवाला बनाया गया है और ज़ाहिर है कि जब अल्लाह तआला ने इन्सान को अपना ख़लीफ़ा व नायब (प्रतिनिधी) बनाया। तो यक़ीनन व ख़लीफ़ा सभी प्राणियों से बेहतर होगा, तभी ख़िलाफ़त का काम उसके सुपुर्द किया जाएगा। उसके लिए दुनिया में जो भी फ़ायदे व नेमते हैं, उन सबको अल्लाह तआला ने इन्सानों के फ़ायदे के लिए तय किया है। ताकि इन्सान इस दुनिया में अच्छी तरह काम कर सके और हुस्ने कारकरदगी के श्रेष्ठ उदाहरण प्रस्तुत कर सके। लिहाज़ा हमें चाहिये कि हम अल्लाह तआला के साथ किसी को शरीक न ठहराएं। हर लम्हा अपना जायज़ा लेते रहें और हमेशा चौकन्ना रहें कि कहीं शैतान अपने हरबे में कामयाब न हो जाए।

इल्म के आदाब

मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी रह०

जिन लोगों का खेती–बाड़ी से संबंध है वे इस बात को अच्छी तरह से जानते हैं कि इन्सान अपने खेत में जितनी अच्छी और उचित खाद का इस्तेमाल करता है, उतनी उसकी फ़सल अच्छी हाती है। ठीक उसी तरह इन्सान का मामला भी है। वह अपनी खेती को इल्म (ज्ञान) के पानी से जितना सींचेगा, उसके अन्दर वह खाद डालेगा जिसकी मांग है, उतना ही उसका दिल अच्छा होता चला जाएगा और वह इल्म की मंज़िलें तय करता चला जाएगा और फिर उसकी खेती ख़ूब लहलहाएगी।

बात यह है कि इल्म का काम ही प्यासे होटों की प्यास बुझाना है और ग़लतफ़हमियों और गलत रस्मों को दूर करना है। जो व्यक्ति इल्म से अपना संबंध जितना मज़बूत रखेगा, वह उसी क़दर अपने अन्दर वज़न महसूस करेगा और उसको ज़िन्दगी की किसी मोड़ पर परेशानी नहीं होगी। हक़ीक़त यह है कि अल्लाह तआला ने हमारा जो निज़ाम (व्यवस्था) बनाया है, अगर उस निज़ाम को हम समझ लें तो हमको कहीं परेशानी हो ही नहीं सकती और विशेषतया जो शंकाएं व सवाल कच्चे दिमाग़ की उपज हैं वे भी नहीं पैदा हो सकते। वर्तमान समय की एक पीड़ा यह है कि देखने से तो ऐसा प्रतीत होता है कि इल्म बढ़ता जा रहा है, जिसको जानकारी का नाम दिया जा सकता है। इन अधूरी जानकारियों का नतीजा है कि वे भ्रम व शंका पैदा करती हैं। यही कारण है कि वर्तमान समय में वैचारिक मतभेद का वातावरण आम है। जबकि यदि इन ही जानकारियों को पुख़्ता कर लिया जाए और इल्म में गहराई हो और इल्म की जो बरकतें अल्लाह ने रखी हैं, वह सारी की सारी चीज़ें पायी जाती हों तो कभी किसी को कोई शंका नहीं हो सकती। शंका उत्पन्न होना इस बात का प्रमाण है कि अभी इल्म कच्चा है। जो बच्चे और बच्चियां नीचे क्लासों में पढ़ते हैं उनके दिल व दिमाग़ में बहुत सारे सवाल पैदा होते हैं, लेकिन वे सवाल आगे की कक्षाओं में पहुंचकर समाप्त हो जाते हैं और उसके बाद बच्चा सही लाइन पर चलता रहे, अध्ययन करता रहे, तो उसकी शंकाएं बिल्कुल समाप्त हो जाती हैं। वास्तव में उन्हीं मेहनती और इल्म दोस्त लोगों को कुरआन मजीद में "रासख़ीन फ़िल इल्म" कहा गया है अर्थात उनके इल्म का खूंटा इतना मज़बूत है कि आंधियां चले या तूफ़ान आये और कैसी ही मौजें उसको निकालने या हिलाने की कोशिश करें, लेकिन वह अपनी जगह पर अडिग रहता है। कोई उसको हिला नहीं सकता।

आज इस समय की जो समस्या है वह यही है कि इल्म का क्षेत्र बढ़ता जा रहा है और गहरायी कम होती जा रही है। ज़रूरत इस बात की है कि गहराई बढ़े, इसकी अत्यधिक आवश्यकता है। क्योंकि जब गहराई होगी तो उसके अन्दर वज़न भी होगा। भारी भरकम वही व्यक्ति होता है जिसके अन्दर गहराई होती है। इसी को कहते हैं कि अमुक व्यक्ति का इल्म ठोस है। यद्यपि जिसके अन्दर गहराई नहीं होती तो वह एक गुब्बारे की तरह होता है। आजकल का इल्म ऐसा ही है। इसीलिए किसी ने ज़रा सा कुछ कह दिया तो तुरन्त लुढ़कते नज़र आते हैं। किसी ने कोई शंका उत्पन्न करा दी तो तड़पते नज़र आते हैं। यह सब कमइल्मी और निम्नस्तर के इल्म का नतीजा है। इसीलिए आवश्यकता है कि जल्दी किसी के कहने सुनने में न आएं और आजकल जो एतराज़ की शक्लें पैदा हो रही हैं, उनको देखने से परेशान न हों, आगे बढ़े तो आपको बहुत सी बातें मालूम होती चली जाएंगी। मगर इसके लिए अध्ययन ज़रूरी है। ज़ाहिर है कि हर छोटा बड़ी चीज़ नहीं समझ सकता, लेकिन हर बड़ा हर छोटी चीज़ समझ सकता है। पहले आप बड़े बनें तो ख़ुद छोटी चीज़ नज़र आएंगी। क्योंकि जब आदमी बड़ा बनता है तो उसकी रोशनी तेज़ होती है और इल्म एक रोशनी है। जब आदमी बड़ा होगा तो उसकी रोशनी तेज़ होगी। जब रोशनी तेज़ होगी, तो छोटी चीज़ें भी नज़र आएंगी और इल्म में छोटा होगा तो फिर ज़ाहिर है कि बड़ी चीज़ें भी नज़र नहीं आएंगी, छोटी तो बहुत दूर की बात है।

आजकल इल्म की कमी का ही नतीजा है कि अक़ीदा (आस्था) तक दांव पर लग गया है। इसलिए अक़ीदे में जो बड़ी–बड़ी चीज़ें हैं, उनको हर आदमी को समझना चाहिये। बच्चा हो या बड़ा हो, और यहां तक कि जाहिल हो या पढ़ा–लिखा हो, जाहिल के अन्दर भी अक़्ल आम है। उनके अन्दर अल्लाह ने जो चीज़ें रखी हैं, वह उनको इस्तेमाल करें तो अक़ीदा ठीक हो सकता है। क्योंकि अल्लाह तआला ने अक़ीदे को ठीक करने के लिए सारी दुनिया में ऐसी निशानियां बिखेर रखी हैं कि आख़िरत में

जाने के बाद कोई व्यक्ति कह सकता कि हम क्या करते, हमको मालूम नहीं था। अल्लाह तआला कहेगाः तुमने क्यों अपनी अक़्ल का इस्तेमाल नहीं किया और जो अक़्ल वाले अक़्ल की बातें करते थे तुम उनके पास क्यों नहीं गये। इसीलिए जहन्नम वालों का कथन कुरआन में बताया गया हैः

"अगर हम अक़्ल का सही इस्तेमाल करते या सुनते तो हम जहन्नम वालों में से न होते।" (सूरह मुल्कः 10)

मालूम हुआ कि अक़्ले आम भी अल्लाह ने इसीलिए दी है, ताकि आदमी सही रास्ते को पहचाने। अपने रब को पहचाने। मारिफ़ते आम्मा उसको हासिल हो।

अलबत्ता जिन लोगों को अल्लाह तआला ने इल्म दिया है, उनको उस इल्म से फ़ायदा उठाना चाहिये और उसके लिये ख़ूब मेहनत करनी चाहिये। इल्म रंग उसी वक़्त लायेगा जब इल्म से सही तौर पर संबंध हो जाएगा और उसके अन्दर गहराई पैदा होती चली जाएगी और उसके अन्दर वज़न पैदा हो जाएगा। तो आप बावज़न हो जाएंगे और अगर उसके अन्दर वज़न नहीं पैदा होगा तो बेवज़न होंगे और आपकी हैसियत निम्न स्तर की होगी। आपको जो चाहेगा, जहां चाहेगा, जैसा चाहेगा, इस्तेमाल कर लेगा। और अगर आपके अन्दर वज़न तो हर आदमी न आपको हिला सकेगा और अल्लाह ताआल ने आपको जो फ़िक्र दी है, कुरआन व हदीस के मुताले से उससे आपको कोई बहका नहीं सकेगा। इसलिए ज़रूरत इस बात की है कि मुताला हो और सही मुताला हो। और यह उसी वक़्त होगा जब हर चीज़ तरतीब से हो। अगर क्रमवार अध्ययन न किया गया तो कभी–कभी इन्सान बहकी हुई बातें करने लगता है। इसीलिए हमारे बहुत से वे लोग जो आजकल इल्म हासिल कर रहे हैं, वे इल्म में बच्चे होतें हैं और अपने को समझ लेते हैं कि हम बहुत ताक़तवर हैं, योग्य हैं, नतीजे के तौर पर वे ऐसी किताबे अपने अध्ययन में लाते हैं, या ऐसी चीज़ें पढ़ने लगते हैं जिनसे वे फ़िक्री बेराहरवी का शिकार हो जाते हैं। और फिर खुद ही शिकार नहीं होते बल्कि कितनो को उसका शिकार कर देते हैं, इसलिए ज़रूरत इस बात की है कि मुताला हो, इल्म हो, और उसकी गहराई हो।

इसके साथ–साथ अल्लाह ने इन्सान को जो विशेषता दी है, उन विशेषताओं को पहचानना भी ज़रूरी है। क्योंकि अल्लाह को भी जानना ज़रूरी है और अपने को भी पहचानना ज़रूरी है। अगर आपने बरतन नहीं जाना कि उस बरतन में क्या रखा जाएगा, और चीज़ आपने ले ली तो मामला मंहगा पड़ जाएगा। इसलिए दोनों को जानना ज़रूरी है कि फ़लां चीज़ फ़लां बर्तन में रखी जाएगी। जैसे इल्म ही है, इल्म जो है, उसकी मिसाल दूध से दी गई है, तो दूध हर बर्तन कुबूल नहीं करता, अगर आपने दाल वाले बर्तन में दूध ले लिया तो दूध फट जाएगा। दूध के लिए बहुत अच्छा बर्तन होना चाहिए, बिल्कुल साफ़–सुथरा। उसके बाद फिर यह कि हरएक को हज़म नहीं होता। लिहाज़ा इसी तरह ठीक इल्म का भी हाल है। अगर तालिब इल्म ने अपने ज़र्फ़ को मांजा नहीं और इल्म का दूध ले लिया तो नतीजा यह होगा कि उसका इल्म फट जाएगा और वह किसी काम का नहीं रहेगा। इसीलिए कुरआन की आयत में तज़किया पहले लाया गया है। तज़किया के माने यही हैं कि आप अपने ज़र्फ़ को साफ़ कर लें, जिसके बग़ैर कुछ न होगा।

अर्थात यह कि ज्ञान प्राप्त करने के मार्ग में उपरोक्त उसूली बातों को यदि ध्यान में रखा जाए तो वह ज्ञान बहुत ही सम्मानीय एवं श्रेष्ठ होगा। वरना उस ज्ञान की वास्तविकता जानकारी से बढ़कर कुछ न होगी। इस क्रम में पहली बात यही है कि इन्सान अपनी नियत को सही करे और अपने ज़र्फ़ को इल्म के लिए बिल्कुल साफ़–सुथरा कर ले, उस इल्म की अहमियत को समझे, उसके सक़्ल से बाख़बर हो और उसके नतीजे पर निगाह रखे, और उसको अल्लाह की मारिफ़त पाने का एक ज़रिया समझे, बल्कि ज़िन्दगी गुज़ारने के लिए जिस तरह सांस का होना ज़रूरी है, उसी तरह उसका होना भी ज़रूरी समझे, क्योंकि इल्म ही वह ज़ेवर है जिसके बारे में मुस्तक़िल इज़ाफ़े की हदीस पाक में दुआ की गई है। बक़िया मुस्तक़िल इज़ाफ़े के सिवाए इल्म के किसी और चीज़ के लिए यहां तक कि बड़ी से बड़ी इबादत के लिए भी दुआ नहीं की गयी है। इल्म के बारे में आया है "ऐ मेरे परवरदिगार! मेरे इल्म को बढ़ा दे" इससे मालूम हुआ कि इल्म इन्सानी ज़िन्दगी में परवाज़ की रूह है। जिसके बिना उन्नति असंभव है। यही कारण है कि हदीस में तहसीले इल्म को हर मुसलमान पर फ़र्ज़ क़रार दिया गया है, क्योंकि इल्म वह ज़ेवर है कि कोई शख़्स अगर उससे वाबस्तगी हासिल कर ले तो हर मुश्किल उसके लिए हल हो जाएगी। वर्तमान समय में इस्लामी मदरसों का क़याम भी इसी मक़सद के तहत है, जहां इन चीज़ों की समय–समय पर तजदीद करायी जाती रहती है।

क्रमवारः

एकेश्वरवाद क्या है?

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

रसूलुल्लाह स0अ0 का इल्म (ज्ञान):

अल्लाह के रसूल (स0अ0) जो आख़िरी नबी और सबसे बरग़ज़ीदा, सबसे बड़े नबी हैं, सबसे महबूब नबी हैं। रसूलुल्लाह (स0अ0) को अल्लाह तआला ने अपने इल्म का एक हिस्सा दिया है लेकिन यह समझना कि सबकुछ दे दिया है, आप हर चीज़ के जानने वाले हैं, यह कलिमा–ए–शिर्क है। इसलिए कि इसमें क्या हुआ? इसमें यह हुआ कि अल्लाह की "आलिमुल ग़ैब" और "अल्लामुल ग़ुयूब" जो विशेषता है यानि सभी चीज़ों के जानने वाले की जो विशेषता है, हमने उस विशेषता में दूसरे को साझीदार बना दिया। साफ़ है कि यह शिर्क (बहुदेववाद) है। रसूलुल्लाह (स0अ0) मुतलक़न आलिमुल ग़ैब नहीं हैं आप (स0अ0) उस ग़ैब को जानने वाले हैं जो अल्लाह ने उन्हें बताया है। ऐसी बहुत सारी चीज़ें हैं जिसकी रसूलुल्लाह (स0अ0) ने भविष्यवाणी की। आपने बहुत सी घटनाओं का वर्णन किया जो अल्लाह ने आपको बताए लेकिन कितनी घटनाएं हैं जो आप (स0अ0) नहीं जानते जो आपके पीछे है। हदीस में आता है कि एक बार हज़रत जिब्राईल अलैहिस्सलाम आये। हुजरे शरीफ़ के दरवाज़े पर खड़े हुए। रसूलुल्लाह (स0अ0) ने कहाः अन्दर आ जाइये, वे कहने लगे कि मैं नहीं आ सकता, आपने कहाः क्या बात है? तो कहने लगे कि आपकी चारपायी के नीचे कुत्ते का बच्चा है, और जहां कुत्ता या कुत्ते का बच्चा होता है, वहां फ़रिश्ते नहीं आते, रसूलुल्लाह (स0अ0) ने कहाः मुझे मालूम नहीं, फिर आपने कुत्ते का वह बच्चा निकलवाया।

(सुनन अबीदाऊद)

इससे पता चला कि रसूलुल्लाह (स0अ0) को पता नहीं था कि कुत्ते का बच्चा या जो जानवर है वह आपकी पलंग के नीचे है। पता चला कि आप (स0अ0) आलिमुल ग़ैब नहीं थे। हर चीज़ आप जानें ऐसा नहीं है। कितनी चीज़ें आपने बता दीं, और कितनी चीज़ें नहीं बतायीं। जितना अल्लाह ने आपको बता दिया वह आपने बता दिया। जो ग़ैब की ख़बरें अल्लाह ने आपको दीं वह आपने उम्मत को बतायीं। लेकिन यह कि आप तमाम चीज़ों के जानने वाले हैं, ऐसा नहीं है। कुत्ते वाली यह एक मिसाल दी गयी। अगर हदीस का अध्ययन करें तो ऐसी दसियों मिसालें, दसियों घटनाएं हैं, जिनमें यह वास्तविकताएं सामने आ जाएंगी। बहुत से अजीब व ग़रीब घटनाएं हैं। कुरआन मजीद में इसके इशारे भी हैं। एक बार एक साहब आये और उन्होंने शिकायत की कि फ़लां साहब ने हमारे यहां चोरी की है। आप (स0अ0) ने मामला तलब किया, सभी लोग आए और लोगों ने अपनी–अपनी दलीलें दीं, तो जिनको चोर समझा जा रहा था, चूंकि उनको ज़बानदानी हासिल थी, उनकी ज़बानें तेज़ थीं, इसलिए उन्होंने अपनी बात बड़ी ताक़त से कही, इतनी ताक़त से कही कि आप (स0अ0) ने सोचा कि यह हक़ पर हैं और आप (स0अ0) उनके लिए फ़ैसला करने वाले ही थे, बाद में यह पता चला कि वह हक़ पर नहीं थे। इसलिए कुरआन मजीद की आयत उतरी और यह कहा गया कि आप (स0अ0) उसके तरफ़दार न बन जाएं जो कि ज़बान की तेज़ी से अपनी बात साबित कर रहा है, हालांकि वह हक़ पर नहीं हैः

"यानि हमने आप पर ठीक–ठीक किताब उतार दी ताकि जैसा अल्लाह ने आपको रास्ता दिखाया उसके मुताबिक़ आप लोगों में फ़ैसले करते रहें और ख़यानत करने वालों के तरफ़दार न हो जाएं।" (सूरह निसाः 105)

इस तरह साफ़ तौर पर यह बात स्पष्ट कर दी गई कि असल मसला आप स0अ0 के सामने न आ सका। जब अल्लाह ने बताया तब आपको मालूम हुआ। तो इन घटनाओं से पता चला कि आप स0अ0 आलिमुल ग़ैब नहीं थे, बल्कि आप ग़ैब की वह बातें जानते थे, जो अल्लाह ने आपको बतायीं। इसलिए अगर कोई यह समझता है कि आप मुतलक़न आलिमुल ग़ैब हैं तो यह

मुश्रिकाना अक़ीदा (बहुदेववादी आस्था) है। हम अगर यह न कहें कि वह काफ़िर हो गया, मुश्रिक हो गया तो इतना तो ज़रूर कहेंगे कि यह मुश्रिकाना अक़ीदा (बहुदेववादी आस्था) है। अलबत्ता यह तो अल्लाह ही बेहतर जानता है कि वह अस्ल में काफ़िर या मुश्रिक हुआ कि नहीं। क्योंकि रसूलुल्लाह स0अ0 ने हमें मना किया है कि जब तक किसी के अन्दर ईमान की एक पहचान भी है तो काफ़िर–मुश्रिक न कहो। इसलिए हम लोग किसी को आसानी से न किसी को काफ़िर कहते हैं न मुश्रिक, लेकिन यह ज़रूर कहते हैं कि उसका यह अमल मुश्रिकाना है। उसका यह अक़ीदा मुश्रिकाना है। तो अगर कोई अल्लाह के रसूल स0अ0 को आलिमुलग़ैब समझता है, तो यह अक़ीदा मुश्रिकाना कहलाएगा और डर है कि ख़ुदा न करे कि उसका ईमान बाक़ी न रहे।

दावते फ़िक्र व अमलः

ग़रज़ कि अपने अक़ीदे को मज़बूत करने की ज़रूरत है और जो भी बातें ऐसी हमारे अन्दर दाख़िल हो गईं हैं, हो सकता है कि अनजाने में दाख़िल हो गईं हों उनको टटोलने और उनका जायज़ा लेने की ज़रूरत है, ताकि हम ख़ालिस अक़ीदे तौहीद को मज़बूत करें। यह समझे कि अल्लाह अपनी ज़ात में भी तन्हा है और अपनी सिफ़ात में भी तन्हा है और इबादत के लिए उसकी ज़ात तन्हा है। न किसी की बन्दगी की जाएगी, न किसी की वह इबादत की जाएगी, जिसको इन्तिहाई ताज़ीम कहते हैं, या आख़िरी दर्जे की मुहब्बत जिसके नतीजे में आदमी फिर इबादत करता है। यह केवल अल्लाह तआला के लिए ही है। अल्लाह के अलावा किसी के लिए यह काम जायज़ नहीं।

तौहीद का अक़ीदाः

"बता दीजिए कि वह अल्लाह एक है, वह अल्लाह जो किसी का मोहताज नहीं और सब उसके मोहताज हैं, न वह किसी का बाप है न किसी का बेटा और कोई भी उसके जोड़ का नहीं।" (अलइख़्लासः 1–4)

सूरह इख़्लास कुरआन मजीद की एक छोटी सी सूरत है, जिसमें तौहीद के अक़ीदे को बहुत ताक़त के साथ पेश किया गया है। यही वजह है कि इसको सूरह इख़्लास कहते हैं, यानि आदमी हर तरफ़ से कटकर एक अल्लाह का हो जाए और तन्हा उसी को सबकुछ समझे, वही ज़रूरत का पूरा करने वाला और तमाम मसाएल का हल करने वाला है, इस सूरत में अल्लाह तबारक व तआला रसूलुल्लाह स0अ0 को ख़िताब करते हुए फ़रमाता है कि आप फ़रमा दीजिए कि वह अल्लाह एक है, और फिर उसके बाद फ़रमाया कि "अल्लाहुस्समद" वह अल्लाह "समद" है। समद का जो शब्द है उसके तरजुमे में बहुत सारे लोग "बेनियाज़" का शब्द इस्तेमाल करते हैं, लेकिन जो सही अर्थ है वह अदा नहीं होता, हक़ीक़त में समद उसको कहते हैं जो सबसे बेनियाज़ हो, लेकिन सबके उसके नियाज़मन्द हों, सिर्फ़ बेनियाज़ का जो शब्द है उसका यह अर्थ यह हो जाता है कि न उसको किसी की ज़रूरत है और न किसी को उसकी ज़रूरत है। हालांकि "समद" का जो शब्द है उसमें यह अर्थ शामिल है कि वह किसी का ज़रूरतमन्द नहीं लेकिन सब उसके ज़रूरत मन्द हैं, सब उसके सामने अपनी हाजते रखते हैं, और उसी की तरफ़ रुजूअ होते हैं।

"न उसने किसी को जन्म दिया और न उसे जन्म दिया गया" इसमें वह अक़ीदा जो ईसाईयों का है उसकी भी नफ़ी की गयी है। और मुतलक़न यह बात कही गयी है कि इन्सान अल्लाह तआला को अपने ऊपर क़यास न करे, तवालुद व तनासुल का जो सिलसिला है अल्लाह तबारक व तआला उससे बेनियाज़ है, और यह चीज़ उसके लिए ऐब है और वह हर ऐब से दूर व पाक है। इसीलिए न उसका कोई बाप है, न उसकी कोई औलाद है, और फिर सूरह के आख़िर में जो बात कही गयी है कि उसके बराबर का कोई नहीं है, एक जगह इरशाद हैः

"यानि उसके जैसा कोई नहीं", उसके बराबर का कोई नहीं, सब उसकी मख़लूक हैं, वह तन्हा ख़ालिक़ है, ज़ाहिर है कि जो पैदा करने वाला है तो उसके सामने मख़लूक़ात में से कोई भी हो और कितना ही बढ़ जाए, लेकिन मख़लूक़ में कोई ख़ालिक़ के बराबर नहीं हो सकता, जो ख़ालिक़ का मख़लूक़ का फ़र्क़ है, वह बहरहाल क़ायम रहेगा। अल्लाह और उसकी सिफ़ात के सिवा दुनिया में जो कुछ मौजूदात हैं वे सबके सब हादिस हैं, और सब अल्लाह के पैदा किये हुए हैं और अल्लाह की ज़ात क़दीम है, हमेशा से है और हमेशा रहेगी, वह अज़्ली है, अब्दी है, तो वह मख़लूक़ जो कि हादिस हों, जिसको अल्लाह ही ने पैदा किया, वह अल्लाह तआला यानि अपने ख़ालिक़ की बराबरी नहीं कर सकती।

परेशानियों का मुक़ाबला कैसे करें?

मौलाना असरारुल हक़ क़ासमी (सांसद, राज्यसभा)

अल्लाह के रसूल स0अ0 ने फ़रमायाः यह दुनिया मोमिन के लिये क़ैदख़ाना है। इसका मतलब यह है कि दुनिया में हर इन्सान पर इन्क़िलाबात और ज़माने की गर्दिशों का दौर आता है, लेकिन आम इन्सानों के मुक़ाबले में मोमिन बन्दे की आज़माइश ज़्यादा सख़्त होती है। यह आज़माइश इसलिए नहीं होती है कि अल्लाह तआला अपने महबूब बन्दों को तकलीफ़ में डालना चाहता है, बल्कि इसलिए होती है कि अल्लाह तआला उसके ज़रिये से मोमिन बन्दे का मर्तबा और दुनिया व आख़िरत में उसे मिलने वाली नेमतों में बढ़ोत्तरी करना चाहता है। यही वजह है कि जब हम अम्बिया, सिद्दीक़ीन, और सालिहीन की सीरत व सवानेह का मुताला करते हैं तो पता चलता है कि उनकी ज़िन्दगियां गोना गों मसाएब और तकलीफ़ों में बसर हुईं। उन्हें अपनों की तरफ़ से भी तकलीफ़ें पहुंचायी गयीं और दूसरों की तरफ़ से भी तकलीफ़ें दी गईं। मगर उन्होंने ख़ुशी से इन हालात का मुक़ाबला किया जिसकी वजह से उन्हें इस दुनिया में भी अल्लाह की नेमतें नसीब हुईं और मौत के बाद जो बुलन्द मक़ाम हासिल हुआ होगा वह अलग है।

ख़ुद हमारे नबी ने जब दीन के पैग़ाम को आम करना शुरू किया तो सबसे पहले आप स0अ0 के ख़ानदान के लोग बल्कि आपके चचा अबूलहब ने सच की राह में रोड़ा अटकाने की कोशिश की। सबने आप स0अ0 को तकलीफ़ पहुंचाने के लिये हर तरीक़े को अपनाया। आप स0अ0 की बेटियां उसके बेटों के निकाह में थीं, जिन्हें उसने तलाक़ दिलवाई। इसके अलावा मक्का के सरदारों के साथ मिलकर तौहीद के मिशन को कमज़ोर करने की साज़िशों में लगा रहा। रसूलुल्लाह स0अ0 के साथ–साथ शुरूआती दौर में जिन लोगों ने इस्लाम कुबूल किया था उन्हें भी बहुत ज़्यादा तकलीफ़ें पहुंचायी गयीं। वे अपने ही वतन और अपने ही घर में अजनबी हो गये। यहां तक कि जब मुसीबतें बर्दाश्त से बाहर हो गईं तो अल्लाह के हुक्म से मुसलमानों को पहले मक्का से हब्शा और उसके बाद मदीना हिजरत करने का हुक्म दिया गया। रसूलुल्लाह स0अ0 और मुसलमान इन परेशानियों को न सिर्फ़ यह कि ख़ुशी–ख़ुशी झेलते रहे, बल्कि साथ–साथ अपनी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी और दीन की तब्लीग़ के काम को भी अंजाम देते रहे। यहां तक कि एक दिन वह भी आ गया जब अल्लाह की मर्ज़ी से उनकी मामूली सी जमाअत पूरी दुनिया में एक महान क़ौम बनकर उभरी। जो अख़लाक़ी व इन्सानी अक़दार की पासदारी में भी दुनिया की सभी क़ौमों से आला थी। यह तो कुरूने अव्वल के मुसलमानों की इज्तिमाई सूरतेहाल थी। अगर उनकी इन्फ़िरादी ज़िन्दगियों का मुताला करें तो मालूम होगा कि उनमें से हर एक आला दर्जे का इन्सान और मिसाली मुसलमान था। उन लोगों ने अपनी ज़िन्दगी की हर सांस को अल्लाह की मर्ज़ी और उसके हुक्म के ताबेअ कर रखा था। उनके पेशनज़र अल्लाह की रज़ा रहती थी। वे अपना क़दम अल्लाह के बताए हुए रास्ते पर ही उठाते थे, चाहे उन पर कितनी बड़ी मुसीबत क्यों न आ जाए। वे इससे दिलबर्दाश्ता नहीं होते बल्कि अल्लाह की रहमत व इनायत पर भरोसा करते हुए उस मुसीबत का मुक़ाबला करते थे। उनका तो ईमान इतना पुख़्ता होता था कि अगर वे किसी शहर में हों और अगर वहां कोई वबाई मर्ज़ फैल जाए तो वहां से भागने को वे ईमान के ख़िलाफ़ समझते थे। उनका अक़ीदा था कि अगर अल्लाह ने इस मर्ज के ज़रिये ही उनकी मौत मुक़द्दर की है तो वे अपनी तक़दीर से कैसे भाग सकते

हैं। वे ऐसे लोग थे कि अगर उनके घरों में सिर्फ़ उनके अपने घरवालों के लिये एक वक़्त का खाना होता और उसी बीच कोई दूसरा ज़रूरतमंद पहुंच जाता तो वे अपनी भूख–प्यास छोड़कर उस ज़रूरतमन्द इन्सान का ख़्याल करते और अपने घर का सारा खाना उसको दे देते थे।

अस्ल में इस्लाम और ईमान उनके दिल व दिमाग़ व रग व रेशे में पेवस्त हो चुका था उसकी वजह से उनसे सिर्फ़ वही काम होता था, जिसमें अल्लाह की रज़ा होती थी। हद दरजा एहतियात के बावजूद अगर उनमें से किसी से भी मामूली सा गुनाह भी हो जाता तो उन्हें फ़ौरन उसका एहसास हो जाता था और फिर वे उसकी तलाफ़ी तक चैन की सांस नहीं लेते थे।

बाद के मुसलमानों के लिये बल्कि क़यामत तक आने वाले तमाम मुसलमानों के लिये नबी करीम स0अ0 की हयाते तैयबा और फिर आप स0अ0 के सहाबा रज़ि0, ताबईन व तबअ ताबईन और सुलहाए उम्मत की ज़िन्दगियां ही अमल का नमूना हैं और उनसे हमें रूहानी गिज़ा मिलती है। जब हम अपने नबी की नूरानी ज़िन्दगी और आपको पेश आने वाली मुसीबतों व हादसातों पर नज़र डालते हैं तो उनके मुक़ाबले में हमारे ऊपर आने वाली मुसीबतें कम मालूम होती हैं। फिर मजमूई तौर पर पूरी उम्मत पर जो अलग–अलगतरह की आज़माइश आती रहती हैं वह अव्वल तो हमारे ईमान व इस्लाम की मज़बूती व इस्तक़ामत को नापने के लिये हैं, जैसा कि अल्लाह तआला ने क़ुरआन पाक में कहा कि तुम बिना आज़माइश के जन्नत में कैसे दाख़िल हो सकते हो। या विभिन्न क़ौमों पर पिछली उम्मतों और क़ौमों के इम्तिहानों का ज़िक्र करके हमें बताया गया है कि जो क़ौमें और जो उम्मतें इस दारुल इम्तिहान में सुर्ख़रू होना चाहती हैं, उन्हें अपने इम्तिहान के सभी पर्चे बिना किसी सुस्ती और कोताही के सही–सही हल करने होंगे। इसीलिए आज़माइश चाहे इन्फ़िरादी हो या इज्तिमाई, शरीअत का तक़ाज़ा है कि हम ऐसे मौक़ों पर जज़अ व फ़ज़अ करने के बजाए इस मुसीबत से निकलने की बेहतर तदबीर करने के साथ सब्र करें। ऐसे वक़्त में अल्लाह तआला को पहले से ज़्यादा याद करें, अपने गुनाहों की माफ़ी चाहें, तौबा करें, नेकी के काम ज़्यादा से ज़्यादा करें, बुराइयों से बचने की हर मुमकिन कोशिश करें, जो नेमतें अल्लाह की तरफ़ से हासिल हैं उन पर अल्लाह का शुक्र करें। हम हासिल शुदा नेमतों पर शुक्र अदा करेंगे तो अल्लाह का यह वादा है कि वह हमें दूसरी वह नेमतें भी देगा जो हमारे पास नहीं है।

ख़ास तौर पर ऐसे वक़्त में हम बहुत परेशान हो जाते हैं जब घर में कोई बहुत ज़्यादा बीमार पड़ जाए, अचानक किसी की मौत हो जाए, कारोबार में नुक़सान हो जाए या कोई ऐसी मुसीबत आ जाए जिसका हमें वहम व गुमान भी न रहा हो। ऐसे वक़्त में हमारे ज़हन में तदबीरें तो बहुत आती हैं और हम उन तदबीरों पर अमल भी करते हैं लेकिन फ़ितरी तौर पर इन्सान की तवज्जो ऐसे वक़्त में अल्लाह की तरफ़ भी मबज़ूल हो जाती है। यह वह वक़्त होता है जब बन्दा अपने रब के बहुत ज़्यादा क़रीब हो जाता है। उस वक़्त वह जो भी दुआ करता है वह बहुत ख़ुलूस से करता है। जो कुछ भी मांगता है उसमें हक़ीक़ी मुहताजी नुमायां होती है। एक ख़ास क़िस्म का लगाव होता है और यह एहसास भी कि अल्लाह के अलावा उसे उस मुसीबत से कोई भी निजात नहीं दे सकता है। इसीलिए हम पर ज़िन्दगी में जब भी कोई कड़ा लम्हा आए तो सबसे पहले हमें अपने महबूब नबी की सीरत और अल्लाह के नेक बन्दों की ज़िन्दगियों और उन पर बीतने वाले इम्तिहानों का नक़्शा होना चाहिए। इससे हमे उस मुसीबत का मुक़ाबला करने का जो हौसला मिलेगा, ताक़त और हिम्मत मिलेगी और उसके साथ–साथ अल्लाह पर भरोसा रखते हुए उस मुसीबत से निकलने की तदबीर भी करनी चाहिए और साथ नेक काम और दुआओं में भी बढ़ोत्तरी कर देनी चाहिये। अल्लाह की रहमत तो बस बहाना ढूंढती है, बन्दे का रोना–धोना और अपने रब से उसकी उम्मीद और भरोसे को अल्लाह तआला कभी नहीं तोड़ता, इसीलिए ऐसा करने से न केवल हमारी वक़्ती परेशानियों का ख़ात्मा हो सकता है बल्कि हमें हमेशा के लिये ख़ास रहमत और उसका तक़र्रुब भी हासिल हो जाएगा।

सज्दा सहू के एहकाम व मसाएल

मुफ्ती राशिद हुसैन नदवी

अगर नमाज़ में कोई भूल–चूक हो जाए तो बाज़ सूरतों में सज्दा सहू करने से तलाफ़ी हो जाती है। चुनान्चे बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत अबूहुरैरा रज़ि0 की रिवायत है कि रसूलुल्लाह स0अ0 ने फ़रमाया: "तुममें से कोई जब नमाज़ पढ़ने के लिए खड़ा होता है तो उसके पास शैतान आ जाता है, और उसको शुब्हे में डालता है, यहां तक कि उसको पता नहीं रहता कि उसने कितनी नमाज़ पढ़ी है। लिहाज़ा अगर तुममें से किसी को इस तरह की बात पेश आ जाए तो उसे चाहिए कि बैठे–बैठे दो सज्दे कर ले।"

सज्दा सहू किस तरह की ग़लती पर किया जाएगा:

सज्दा सहू के ज़रिये हर भूल–चूक की तस्हीह नहीं हो सकती है। अगर भूले से कोई वाजिब छोड़ देता है तो सिर्फ़ उसकी तलाफ़ी सज्दा सहू से हो सकती है, लेकिन अगर जानबूझ कर कोई वाजिब छोड़ दिया या नमाज़ के किसी फ़र्ज़ को छोड़ दिया और उसकी क़ज़ा भी नमाज़ के अन्दर नहीं की तो सज्दा सहू से तलाफ़ी नहीं हो सकती है, बल्कि नमाज़ दोहरानी होगी और अगर कोई सुन्नत या मुस्तहब छूट गया है तो सज्दा सहू के बग़ैर ही नमाज़ हो जाएगी और सुन्नत छूटने की वजह से नमाज़ में जो कमी हुई है उसकी तलाफ़ी सज्दा सहू से मुमकि नहीं। (हिन्दिया)

सज्दा सहू का तरीक़ा:

जब नमाज़ में कोई ऐसा सहू हो जाए जिससे सज्दा सहू वाजिब होता है तो क़ादा–ए–आख़िर में तश्हद पढ़ने के बाद दाहिनी तरफ़ सिर्फ़ एक सलाम फेरें, फिर दो सज्दे करें, फिर बैठ कर दोबारा तश्हद पढ़ें और उसके साथ दरूद व दुआ पढ़कर सलाम फेरें। (शामी, हिन्दिया) इसलिए कि हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ि0 की रिवायत में सराहत से है कि रसूलुल्लाह स0अ0 ने सलाम फेरने के बाद सज्दा सहू किया, साथ ही रसूलुल्लाह स0अ0 ने फ़रमाया: "जब तुममें से किसी को अपनी नमाज़ में शक हो जाए तो उसे चाहिए कि तहरी करे कि सही किया है फिर इतमाम कर ले, फिर सलाम फेरे फिर दो सज्दे करे।" (बुख़ारी व मुस्लिम)

बहुत सी रिवायतों में सलाम फेरने से पहले सज्दा सहू का ज़िक्र आया है, इसीलिए बहुत से इमामों का मसलक यही है और अहनाफ़ के यहां भी अगर कोई सलाम फेरने से पहले सज्दा सहू करले तो मोतबर होगा लेकिन ऐसा करना मकरूह तन्ज़ीही होगा। (शामी)

जैसा कि अर्ज़ किया गया कि सज्दा सहू बुनियादी तौर पर किसी वाजिब के सहवन छूट जाने से वाजिब होता है लिहाज़ा ज़रूरी है कि इनवाजिबात की कुछ तफ़सीलात दर्ज कर दी जाएं ताकि पता चल सके कि सज्दा सहू किन सूरतों में वाजिब होगा।

1– किसी फ़र्ज़ या वाजिब को जब उसकी अस्ल जगह से मुक़द्दम कर दिया जाए तो सज्दा सहू वाजिब हो जाएगा, जैसे क़िरात सेपहले रुकूअ कर लिया या सूरह फ़ातिहा से पहले ही दूसरी सूरह पढ़ ली।

2– नमाज़ के किसी फ़र्ज़ यावाजिब को उसकी अस्ल जगह से मोअख़्ख़र कर दिया तब भी सज्दा सहू वाजिब हो जाएगा जैसे पहली रकआत में सिर्फ़ एक सज्दा किया और दूसरी रकआत में उसकी क़ज़ा करते हुए तीन सज्दे किये उस सूरत में भी सज्दा सहू वाजिब हो जाएगा।

3– किसी फ़र्ज़ या वाजिब की तकरार पर मसलन एक रकआत में दो रुकूअ या तीन सज्दे कर लिये जाएं।

4– किसी वाजिब को छोड़ देना मसलन तश्हुद या सूरह फ़ातिहा छोड़ दी या सिर्री नमाज़ में जहरी या जहरी नमाज़ में सिर्री कर लिया तो उन तमाम सूरतों में सज्दा सहू वाजिब हो जाएगा और सज्दा सहु कर लेने से नमाज़ में आए हुए नुक़्स की तलाफ़ी हो जाएगी। (शामी)

मुकम्मल सूरह फ़ातिहा पढ़ना वाजिब है:

फ़र्ज़ की शुरूआत की दो रकआत और नफ़िल व सुन्नत की सभी रकआतों में सूरह फ़ातिहा पढ़ना वाजिब है। लिहाज़ा अगर भूले से सूरह फ़ातिहा बिल्कुल ही नहीं पढ़ी या उसकी एक आयत या आयत के किसी जुज़ को भूले से छोड़ दिया तो सज्दा सहू वाजिब हो जाएगा, फिर सूरह फ़ातिहा का इब्तिदा में पढना वाजिब है, लिहाज़ा अगर कोई भूले से पहले सूरह फ़ातिहा न पढ़े, दूसरी सूरत शुरू कर दे फिर याद आ जाए तो उसे चाहिये कि सूरह फ़ातिहा पढ़कर फिर से उसके साथ सूरत मिलाए और आख़िर में सज्दा सहू कर ले।

अगर कोई भूले से सूरह फ़ातिहा पढ़ने के बाद फिर से मुकम्मल सूरह फ़ातिहा या उसका कुछ हिस्सा पढ़ ले तो

अगर फ़र्ज़ की इब्तिदा की दो रकआत या सुनन व नवाफ़िल की किसी भी रकआत में ऐसा हुआ है तो उसकी तलाफ़ी के लिए सज्दा सहू वाजिब है। लेकिन अगर फ़र्ज़ की आख़िरी रकअतों में ऐसा हो जाए या सूरह फ़ातिहा पढ़ने के बाद सूरह मिला ली उसके बाद फिर से सूरह फ़ातिहा पढ़ ली तो सज्दा सहू की ज़रूरत नहीं, उसके बग़ैर ही नमाज़ सही हो गयी है। (हिन्दिया)

सूरह फ़ातिहा या सूरह पढ़े बिना रुकूअ में चला जाए तो क्या करे:

अगर किसी शख़्स ने भूले से सूरह फ़ातिहा तर्क कर दी या सूरह फ़ातिहा पढ़ ली लेकिन उसके साथ सूरह नहीं मिलायी और जब रुकूअ में चला गया या रुकूअ करने के बाद क़ौमा में पहुंच गया तो और उसको याद आ गया तो उस पर लाज़िम है कि जो कुछ उससे छूट गया था उसको पढ़े फिर दोबारा रुकूअ करके आख़िर में सज्दा सहू कर ले। (शामी)

फ़र्ज़ की आख़िरी रकआत में सूरह फ़ातिहा पढ़ना भूल जाए या सूरह फ़ातिहा के साथ भूले से सूरह मिला ले तो सज्दा सहू वाजिब नहीं होगा। (हिन्दिया)

क़ौमा और जलसा में जल्दबाज़ी:

नमाज़ में एतदाल और इत्मिनान भी वाजिबात में से है, लिहाज़ा अगर क़ौमा व जलसा में रुके बग़ैर ही नमाज़ पढ़ ली तो अगर ऐसा जानबूझ कर किया तो सज्दा सहू से भी तलाफ़ी नहीं होगी, बल्कि वाजिब छोड़ने से जो कमी आ गयी है, वह नमाज़ दोहराने से ही दूर हो सकती है, लेकिन अगर भूले से ऐसा हो गया तो सज्दा सहू कर लेने से तलाफ़ी हो जाएगी। (हिन्दिया, शामी)

तश्हद छोड़ देना:

अगर क़ादा ऊला या क़ादा आख़िर में पूरा तश्हद भूले से छोड़ दिया या उसका कुछ हिस्सा भूले से छूट गया तो सज्दा सहू वाजिब हो जाएगा। इसी तरह क़ादा में बैठते ही तश्हद पढ़ना वाजिब है, लिहाज़ा अगर तश्हद में बैठकर बजाए तश्हद के कोई और चीज़ पढ़ने लगा तब भी सज्दा सहू वाजिब हो जाएगा। इसी तरह फ़र्ज़ के क़ादा ऊला में तश्हद के बिना तीसरी रकआत के लिए फ़ौरन उठ जाना वाजिब है, लिहाज़ा अगर कोई तश्हद के बाद दरूद शरीफ़ पढ़ने लगा तो अगर "अल्लाहुम्मा सल्ले अला मुहम्मद" तक पढ़ लिया या उससे ज़्यादा पढ़ लिया तो सज्दा वाजिब हो जाएगा। इससे कम पढ़ा तो वाजिब नहीं होगा। इसी तरह अगर क़ादा–ए–ऊला में तश्हद को मुकर्रर पढ़ लिया तब भी सज्दा सहू वाजिब हो जाएगा लेकिन अगर क़ादा आख़िर में तश्हद की तकरार की या नवाफ़िल में क़ादा ऊला के बाद दरूद शरीफ़ पढ़ लिया तो सज्दा सहू करने की कोई ज़रूरत नहीं है। (हिन्दिया)

जहर व अरफ़ा तर्क कर देना:

सिर्री नमाज़ों में आहिस्ता पढ़ना और जिहरी नमाज़ों में इमाम के लिए जहर करना वाजिबात में से है, लिहाज़ा अगर सिर्री नमाज़ों में जहर कर दिया, या जिहरी नमाज़ में इमाम ने सर्रन पढ़ा तो सज्दा सहू लाज़िम हो जाएगा और अगर पूरी क़िराअत इस तरह नहीं की कुछ की तो अगर तीन छोटी आयतें या एक बड़ी आयत के बक़द्र ख़िलाफ़े वाजिब क़िराअत कर दी तो सज्दा सहू लाज़िम हो जाएगा, मौलाना रशीद अहमद लुधयानवी फ़रमाते हैं:

बशमूल हुरूफ़ महज़ूफ़ा तीन छोटी आयतें या एक बड़ी आयत के बक़द्र ख़िलाफ़ हो जाता है, "अर्रहमान" तक 29 हुरूफ़ हैं, लिहाज़ा आगे एक हुरूफ़ भी बढ़ गया तो सज्दा सहू वाजिब हो जाएगा।" (अहसनुल फ़तावा)

यह ख़्याल रहे कि यह हुक्म क़िराअत का है। बक़िया अगर कोई शख़्स भूले से तश्हद, सना, दरूद शरीफ़ या तस्बीहात जहरन पढ़ ले तो उसकी वजह से न तो नमाज़ में कोई ख़राबी आयेगी न सज्दा सहू लाज़िम होगा लेकिन जानबूझ कर ऐसा नहीं करना चाहिए। (शामी)

फ़र्ज़ की आख़िरी रकआत के बाद क़याम:

अगर कोई शख़्स फ़र्ज़ नमाज़ में आख़िरी नमाज़ के बाद बजाए क़ादा करने के खड़ा हो गया, तो अगर उस ज़ायद रकआत का सज्दा करने से पहले–पहले याद आ जाए तो हुक्म यह है कि वह क़ादा की तरफ़ लौट आए और सज्दा सहू कर ले, नमाज़ हो जाएगी लेकिन अगर ज़ायद रकआत का सज्दा कर लिया या उसके बाद याद आया तो सज्दे से जैसे ही सर उठाएगा उसकी फ़र्ज़ नमाज़ नफ़िल बन जाएगी। अब बेहतर यह है कि एक रकआत मज़ीद मिलाए, अगर यह मसला ज़ुहर, अस्र या इशा में पेश आया तो यह छठी रकआत होगी, फ़ज्र में पेश आया तो यह चौथी रकआत होगी, मग़रिब में पेश आया तो मज़ीद रकआत नहीं मिलाएगा, इसलिए कि चार रकआत नमाज़ रकआत मिलाए बिना हो रही है। (शामी)..... (शेष पेज 14 पर)

क़तर पर निशाना क्यों?

डॉ० ग़ितरीफ़ शहबाज़ नदवी

हेनरी किसिंजर अमरीका के पॉलिसी मेकरों में एक बड़ा नाम है। वे 1970 से 1977ई0 तक अमरीका के विदेश मंत्री रहे। उन्होंने अमरीका की विदेश पॉलिसी को एक बड़े ही अर्थपूर्ण वाक्य में यूं बयान किया था: "अगर आप अमरीका के दुश्मन हैं तो आप ख़तरे में हैं और अगर दोस्त हैं तो अत्यधिक ख़तरे में हैं।" यानि यह दोग़ली विदेश नीति है। इसमें न तो कोई स्थायी दोस्त है न स्थायी शत्रु। प्रसिद्ध अमरीकी बुद्धिजीवी नोन चॉम्सकी अपनी किताबों में अमरीका की इस विदेश नीति को छल–कपट पर आधारित बता चुके हैं। अमरीका की यह विदेश नीति जानबूझ कर अपनायी गयी है और यह उस सुपर पॉवर के लिए कोई समस्या नहीं है। वास्तविक समस्या उन देशों की है जो अमरीका के झांसे में आकर उसे अपना दोस्त समझ बैठने की ग़लती करते हैं। पाकिस्तान और खाड़ी देश इसकी खुली हुई मिसाल हैं।

पाकिस्तान पर बातचीत फिर कभी, इस समय खाड़ी देशों का रुख़ करते हैं मई में यहां "अमीरुलमोमिनीन" ट्रम्प ख़ादिमुल हरमैन से मुलाक़ात करने के लिये आये थे। सऊदी बादशाह ने न केवल रिवायती डांस किया बल्कि अमरीका के प्रथम महिला से भी हाथ मिलाया। अमरीकी झंडे को चूमने की ख़बर भी मीडिया में आयी। ख़ादिमुल हरमैन ने जो भेंट ट्रम्प की दीं उनकी अनुमानित राशि 1.2 अरब डॉलर लगायी गई है यानि भारतीय रुपयों में लगभग 600 अरब रुपये। यह राशि बंग्लादेश जैसे ग़रीब देश के सालाना बजट से भी ज़्यादा है, यानि हातिम ताई की क़ब्र पर लात मारी गयी है। इतनी ग़ैरमामूली फ़य्याज़ी और तोहफ़ों की बरसात जिसने भी सुना दांतों तले उंगली दबा ली। लेकिन सिलसिला यहीं नहीं थमा, पहली बार अमरीकी राष्ट्रपति ने रियाध से तिलअवीव के लिये सीधी उड़ान भरी और इस्राईली प्रधानमंत्री बेन्जामिन नेतनयाहू के दिल में यह उम्मीद जगा कि जल्द ही वह दिन भी आयेगा कि जब उनका जहाज़ वहां उतरेगा। उनको स्वयं भी आशा नहीं होगी कि इसकी तम्हीद इतनी जल्दी शुरू हो जाएगी। मगर उनके नये–नये दोस्त बने सऊदी अरब और संयुक्त अरब अमीरात शायद नये दोस्तों को गले लगाने में बड़ी जल्दी में हैं, आख़िरकार इस्राईली अरबों के अमज़ाद ही तो हैं।

अतः ट्रम्प को मध्यपूर्व से गुज़रे ज़्यादा दिन न हुए थे कि अचानक सऊदी अरब एंड कम्पनी ने क़तर से संबंध तोड़ने की घोषणा कर दी। आले सऊद और अमरीका की दोस्ती सत्तर साल पुरानी है। 1954 में सऊदी अरब के मेमार सानी मलिक अब्दुल अज़ीज़ और अमरीकी राष्ट्रपति रूज़वेल्ट के मध्य तेल के बदले सऊदी की सुरक्षा की अमरीकी संधि तय हुई थी। और इस पूरी मुद्दत में अमरीका सऊदी संसाधनों विशेषतयः तेल का अंधाधुंध इस्तेमाल करता रहा। 11 सितम्बर की घटना में मुजरिमीनों में 15 नाम सऊदी नागरिकों के आये। सऊदी अरब के ख़िलाफ़ पश्चिमी मीडिया में ख़ूब नकारात्मक प्रोपगन्डा भी हुआ। यहां तक कि पूर्व राष्ट्रपति ओबामा के रोकने के बावजूद अमरीकी कांग्रेस में यह क़रारदाद भी पास हो गई कि 11 सितम्बर के प्रभावित लोग सऊदी अरब के ख़िलाफ़ अन्तर्राष्ट्रीय कोर्ट में हर्जाने के लिये केस कर सकते हैं। इस सऊदी विरोधी बिल के बाद दोनों देशों के संबंधों में तनाव आ गया था।

फिर भी राष्ट्रपति ट्रम्प के हालिया दौरे के बाद दोनों देशों में अद्वितीय जोश देखने को मिला। इसी दौरे में अमरीका और सऊदी अबर के बीच असलहा ख़रीदारी की जो संधि हुई व असाधारण है। सऊदी अबर 125 डालर के असलहे अमरीका से ख़रीदेगा। सवाल यह है कि अस्लहा ख़रीदने के बाद क्या होगा?सऊदी सेना यमन में कई महीनों में भी थोड़े से हूशी बाग़ियों का कुछ नहीं बिगाड़ पायी। अमरीकी भंडार के जंग लगे असलहों से वह कौन सा तीर मार लेगी?

ट्रम्प ने अपने दौरे में जो आदेश सऊदी एंड कम्पनी को दिये होंगे अब उनके असरात सामने आना शुरू हो गये हैं। सबसे पहला वार क़तर पर किया गया। क़तर से राजनयिक संबंध समाप्त, क़तर एयरलाइन्स की उड़ानों पर रोक, अश्या ख़ुरदनोश की फ़राहमी पर पाबन्दी। सऊदी अरब ने लगभग तथाकथित 45 "दहशतगर्दों" की सूची भी थमा दी कि उनसे संबंध समाप्त करो और उनको गिरफ़्तार

करो। सऊदी विदेश मंत्री ने कहा कि "क़तर को हमारे साथ (यानि खाड़ी देशों के साथ) संबंधों के लिये इख़्वानुल मुस्लिमीन और हमास को छोड़ना होगा।" यहां तक कि नब्बे वर्षीय बुज़ुर्ग आलिमे दीन इमाम यूसुफ़ क़रज़ावी को भी इख़्वान से संबंध के आरोप में आतंकवादी घोषित कर दिया गया और सदस्यता भी समाप्त कर दी गयी। दूसरी ओर क़तर ने खाड़ी देशों के दबाव में आने से इनकार कर दिया। अमीर तमीम बिन हम्मादु सानी ने शेख़ क़रज़ावी को इफ़तार के लिय क़स्र शाही महल में बुलवाया। ईरान व तुर्की क़तर के समर्थन में आगे आये हैं। ईरान ने खाद्य सामग्री भी भेजी है। महल के रहने वाले एक शेख़ ने क़तर के इस बायकाट के ख़िलाफ़ फ़तवा दे दिया है। अमीर कुवैत ने भी सुलह की कोशिशों की शुरूआत कर दी है और उन्हें उम्मीद है कि क़तर और खाड़ी देशों के मध्य जल्द ही संबंध बहाल हो जाएंगे। एक बड़ा डेवलपमेंट यह हुआ कि तुर्क संसद ने क़तर की हिफ़ाज़त के लिये तुर्क सेना को भेजने की मंज़ूरी दे दी है।

ईरान ने क़तर से पेशकश की है कि वह अपनी ज़रूरतों के लिये उसके तीन बंदरगाहों का इस्तेमाल कर सकता है, मगर क़तर ने मोहतात रवैया अपनाया है।

अब पाकिस्तान के प्रधानमंत्री नवाज़ शरीफ़ फ़ौजी जरनल क़मर जावेद के साथ सऊदी अबर गये थे। बताया जाता है कि पाकिस्तान क़तर और सऊदी अबर के बीच कशमकश की शिद्दत को कम करने और सुलह की कोशिश करेगा। मगर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पाकिस्तान की कोई साख नहीं बनी है कि वह सुलह कराने वाले का किरदार निभा सके। अभी तक नवाज़ शरीफ़ का रवैया सऊदी अरब की ताबेदारी का रहा है। पाकिस्तान की मुश्किल यह है कि वह ईरान व सऊदी अरब दोनों से संबंध ख़राब नहीं कर सकता क्योंकि लाखों पाकिस्तानी सऊदी अरब व ईरान में काम करते हैं। ईरान में कम सऊदी अरब में ज़्यादा। और सऊदी अरब में बादशाहत है जिसकी नज़रों को बदलते हुए देर नहीं लगती। क़तर की भी मुश्किल यह है कि ईरान उसका पड़ोसी है और गैस के बड़े भण्डारों से लाभ उठाने के लिए वह ईरान से बेहतर संबंध बनाए रखना चाहता है। दूसरी ओर वह हमास, इख़्वान, करज़ावी इत्यादि के समर्थन से भी पीछे नहीं हट सकता, क्योंकि उसके मिज़ाज में आमरियत नहीं है। सऊदी अरब और दूसरी अरब रियासतों के लिये बड़ी मुसीबत क़तर का आज़ाद चैनल अलजज़ीरा है जो अपनी बोल्ड सरीह, आज़ादाना, जम्हूरी व शफ़्फ़ाफ़ सहाफ़ती रिवायत के लिये विख्यात है और अरब आमरियतों के लिये भी और पश्चिमी मीडिया के लिये भी आफ़त बना हुआ है। लेकिन शायद क़तर उसकी आज़ादी छीने जाने पर तैयार नहीं होगा। हस्बे दस्तूर सऊदी अबर के मुलूकियत नवाज़ उलमा अपने फ़तवों के साथ अपने बादशाहों की हिमायत के लिये आ गये। लेकिन शोसल मीडिया पर उन्हें ताने का सामना है। बहरहाल अगर क़तर ख़लीजी हमसाया रियासतों के इस ज़ालिमाना व जारिहाना मुक़ातअे को झेल जाता है तो उस क्षेत्र में उसके एतबार और वक़ार में बढ़ोत्तरी होगी और यदि अल्लाह न करे सऊदी अबर के आगे उसने घुटने टेक दिये तो मज़हब पसंदो को और बुरे दिन देखने पड़ सकते हैं।

शेषः सज्दा सहू के एहकाम व मसाएल

अगर फ़र्ज़ की आख़िरी रकआत के बाद उसके बाद ज़ायद रकआत के लिए खड़ा हो गया तो जब तक उस ज़ायद रकआत का सज्दा न किया हो हुक्म यह है कि लौट आए और सज्दा सहू करले नमाज़ हो जाएगी। लेकिन अगर ज़ायद रकआत का सज्दा कर लिया तो एक रकआत मज़ीद मिलाए यानि फ़ज्र में चौथी, मग़रिब में पांचवी और ज़ुहर, अस्र, इशा में छठी रकआत ताकि बाद की दो रकआत नफ़िल हो जाएं, फिर आख़िर में सज्दा सहू कर ले। (शामी)

जहां क़ादा ऊला भूल जाने का ताल्लुक़ है उसकी तफ़सील यह है कि अगर फ़र्ज़ नमाज़ में क़ादा ऊला भूल कर खड़ा होने लगा तो अगर फ़ौरन ही याद आ गया तो जबकि वह क़ुऊद के क़रीब ही था तो उसे बैठ जाना चाहिए और इस सूरत में उस पर सज्दा सहू भी नहीं है , लेकिन वह अगर क़यामक` क़रीब था तो अस्ल हुक्म यह है कि अब याद आने पर लौटने की ज़रूरत नहीं है, नमाज़ आगे जारी रखे, और आख़िर में सज्दा सहू करले, लेकिन अगर नमाज़ आगे जारी रखने के बजाए क़ादा के लिए लौट आया तो भी सही क़ौल के मुताबिक़ उसकी नमाज़ हो जाएगी लेकिन सज्दा सहू इस सूरत में भी करना होगा। (हिन्दिया, शामी)

मुसलमानों की कार्यप्रणाली

मौलाना अज़ीज़ुल हसन सिद्दीक़ी

देश अभी नोटबंदी का दंश झेल ही रहा था कि चुनाव का बिगुल बज गया। उत्तर प्रदेश में सपा के ख़ेमे में घमासान जंग छिड गयी। बसपा में भगदड़ मची। भाजपा को इस बात की शंका अवश्य थी कि नोटबंदी चुनाव में मुद्दा बनेगी और उसके लिए जवाब देना मुश्किल होगा। लेकिन उसके पीछे संघ का पूरा हाथ था इसलिए ज़्यादा परेशानी का सामना नहीं करना पड़ा और वह आसानी के साथ अपने विरोधी को पटखने में सफल हो गयी। सपा अपने मुखिया की बददिमाग़ी और मुज़फ़्फ़रनगर और शामली में अपने कर्मों के कारण से विशेषतयः मुसलमानों में अपना असर खो चुकी थी। उसको यक़ीन था कि मुसलमानों के दिल दुखी हैं और वे उसकी वादाख़िलाफ़ियों से सख़्त नाराज़ हैं। इसलिए जैसे–जैसे वोटिंग के दिन क़रीब आते जा रहे थे उसकी चिंताएं बढ़ती जा रही थीं इसीलिए उसने घबराहट में कांग्रेस का हाथ थाम लिया। कांग्रेस उससे बड़ी मुजरिम थी जिसके दामन में मुसलमानों से दुश्मनी और अल्पसंख्यकों के नरसंहार के सैंकड़ो धाग़–धब्बे थे। डूबती हुई नाव पर सवार होने का नतीजा ज़ाहिर था। ठीक ऐसे समय में जबकि बसपा में भगदड़ मची हुई थी, संयोग से हमारी कुछ मिल्ली क़ायदीनों ने और उन लोगों ने भी जो ऐसे समय में बयान जारी करने के आदी हैं एवं उलमा व मशाएख़ बोर्ड के ज़िम्मेदारों ने जो प्रधानमंत्री के बहुत क़रीब थे बरबनाए इख़्लास मुसलमानों को बसपा को सपोर्ट करने का मशवरा दिया जिसको मुसलमानों ने शायद कुबूल भी कर लिया, जबकि हक़ीक़त यह थी कि खुद बसपा के कोर वोटर बिखरने वाले हैं जिसको चुनाव के बाद स्वीकार किया गया। कोई नहीं कह सकता था कि आड़े वक़्त में दलित भी बसपा को ठेंगा दिखाएंगे। सब आश्चर्यचकित हैं कि क्या हो गया लेकिन हक़ीक़त यह है कि जो कुछ हुआ संभावना के अनुकूल हुआ।

कहते हैं कि मुसलमानों के वोट बट गये, लेकिन क्यों बटे?और कैसे बटे?इस पर कोई ध्यान नहीं दे रहा है। यह वैसा ही आरोप है जैसा 1946 ई0 में उनके सर थोपा गया था जिससे मुसलमान आज तक पीछा नहीं छुड़ा सके हैं। सुनते–सुनते कान पक गये कि मुसलमानों ने देश का बंटवारा करवाया। सरासर झूठा आरोप है यह। उस समय दस करोड़ मुसलमानों में केवल एक करोड़ वोटर थे और बंटवारे के समर्थन में केवल चार लाख इक्यावन हज़ार एक सौ छप्पन (4,51,156) वोट पड़े थे। इसका अर्थ यह कि साढ़े चार प्रतिशत वोटों ने मुसलमानों की क़िस्मत बांट कर रख दी और वे देश के ग़द्दार ठहरा दिये गये। जिन मुट्ठी भर लोगों ने यह गुनाह किया था वे दुनिया से चले गये, अब बीस करोड़ बेकुसूरों को क्यों सताया जा रहा है।

रह गई बात वोटों के बटने की तो केवल मुसलमान ही नहीं बटे। यादवों और दलितों के वोट भी बटे। मुसलमानों के तो इसलिए बटे कि उनके क़ायदीन उन्हें सलाह देकर किनारे हो गये। हमारे रहनुमा पांच साल तक राजनीति से बिल्कुल कटे हुए रहते हैं और ठीक चुनाव के समय जागरूक होते हैं और मुसलमानों को बेजा ख़ौफ़ में डालकर किसी एक पार्टी की झोली भरने का मशवरा देने लगते हैं। ज़ाहिर है कि ऐसे में वोट तो बटेंगे ही और बहुसंख्यकों के वोट एकजुट होंगे।

अफ़सोस की वे उलमा ग़ुलाम हिन्दुस्तान में भरपूर राजनीति कर रहे थे और अंग्रेज़ सरकार से टक्कर ले रहे थे, आज़ादी पाने के बाद मदरसों और ख़ानकाहों में जा बैठे। शायद उन्होंने लखनऊ की आज़ाद कांफ़्रेंस के फ़ैसलों को सही तौर पर नहीं समझा। इस कांफ़्रेंस ने हरगिज़ यह सलाह नहीं दी थी कि मुसलमान राजनीति से किनारा कश हो जाएं। हमारे बुज़ुर्गों ने गालियां सुनकर और तकलीफ़ें बर्दाश्त करके मुसलमानों के आम ज़हन के ख़िलाफ़ तक़सीमें वतन और दो क़ौमी नज़रिये की मुख़ालिफ़त की थी लेकिन वही बात कही जो देश व क़ौम और खुद मुसलमानों के हक़ में मुफ़ीद थीं। आज उन्हीं की

कमाई हमारे काम आ रही है। आज इस देश में कोई दो क़ौमी नजरिये की हिमायत नहीं करता और क़ौम परवर मुसलमानों और उलमा का हवाला देकर हुकूक तलबी की बात करता है। आज़ादी की लड़ाई में उलमा की सेवाएं हमारी बड़ी पूंजी है लेकिन आज़ादी के बाद हमारी सूझ–बूझ और सरगर्मियों को क्यों घुन लग गया। यह बात समझ में आने वाली नहीं है। कहा जाता है कि ख़ाली घर में जिन्न–भूत क़ब्ज़ा कर लेते हैं। हमने राजनीति के मैदान से दूरी अपनायी तो ज़ाग व जुगन ने इस पर क़ब्ज़ा कर लिया। हमने इस चुनाव में यही देखा कि बहुत से वे नेता जो दिन–रात राजनीति की बातें किया करते थे। चर्चाओं व सभाओं में भाग लिया करते थे, चुनाव के मामले में बिल्कुल साकित व जामिद रहे, जबकि इस चुनाव को आख़िरी चुनाव और रेफ़रेन्डम कहा जा रहा था। हालात की मांग तो यह थी कि वे गोशागीर न होते बल्कि मौजों के दरमियान होते। चुनाव एक प्रकार से जंग का मैदान होता है और इस मौक़े पर हिकमते अमली सेअपना काम करना ज़रूरी होता है। मगर हम इसको एक "सियासी तफ़रीह" समझते हैं। तमामतर बेफिक्री और बेख़बरी के बावजूद मौजे तूफ़ां ने हमारे सफ़ीनों को डूबोने से बचा लिया।

हमारे बड़ो ने कठिन समय में सही दिशा की ओर अपना सफ़र जारी रखा था जबकि हमने किनारा कशी अपना ली, ज़ाहिर है कि क़ौम गुमराह होगी ही।

हम पिछले पांच सालों में दलितों से बराबर मिले होते, मशहूर हुए होते, बातचीत व संधिया हुई होती तो एक बात थी, कुछ भी तो नहीं हुआ और ऐन चुनाव की मुहिम के दौरान चारों ओर से बयान आने लगे कि दलित और मुसलमान एक हो जाएं तो नक़्शा बदल सकता है। दूसरी ओर भाजपा ने बहुसंख्यक वर्ग के लोगों के कान में फूंक दिया है कि देखो मुसलमान एक हो गया है और दलित भी जुट गया है। तुम भी एक हो जाओ और वे एक हो गये। इसका नतीजा हमारे सामने है। इस हक़ीक़त से भी इनकार नहीं किया जा सकता है कि उत्तर प्रदेश में सेक्यूलर कही जाने वाली पार्टियों ने बिहार से सबक़ नहीं लिया और इस घमन्ड में रहीं कि हमें कौन रोकेगा। वे मुसलमानों को टिकट बांटकर उनके वोट बटवाती हैं और भाजपा की राह आसान करती हैं, मुसलमानों को सत्ता में हिस्सेदार बनाने को तैयार नहीं है। उसीकी सज़ा पा रही हैं।

आख़िर में हम यही कहेंगे कि मुसलमान डर के मानसिकता छोड़ दें। मायूसी को अपने क़रीब भी न फटकने दें, हौसला बनाए रखें क़ौमों की ज़िन्दगी में ऐसे मोड़ आते रहते हैं। मोमिनाना फ़िरासत से काम लें। अपनी हैसियत और मक़ाम को पहचानें, इस देश में उनकी हैसियत परेकाह की हनीं है और राह में पड़े पत्थर की भी नहीं कि जो चाहे ठोकर मारकर आगे निकल जाए। वे मुल्क व क़ौम के रहबर व निजातदहिन्दा हैं, जो अच्छे शहरी व अच्छे पड़ोसी बन कर दिखाएं। मानवता के सेवक बने। देश का मध्य वर्ग और ग़रीबी सतह से नीचे जीवन यापन करने वाले बदहाल हैं। थोड़े से दौलतमंद ख़ुशहाल बाक़ी सब परेशानहाल हैं। 36 करोड़ तीस लाख लोग दो वक़्त की रोटी के बिना रात में सोते हैं। ताज़ा आंकड़ों के अनुसार लगभग 9 करोड़ बच्चे स्कूल नहीं जाते। भारतवासियों को वास्तव में ग़रीबी से, अशिक्षा व बीमारियों से लड़ना था, मगर उनको आपस में लड़ाया जा रहा है ताकि आधारभूत आवश्यकताओं की ओर से उनका ध्यान हटाया जा सके। हमें उनका दुख बांटना चाहिये।

शेषः स्वतन्त्रता दिवस का संदेश

इसकी चिन्ता न की गई तो पूरा देश ख़तरे में है। घर में यदि एक व्यक्ति भी बिगड़ जाए तो पूरे घर की नींद हराम हो जाती है, दिन का सुकून छिन जाता है, फिर सकारात्मक सोच समाप्त होने लगती है।

इस समय की सबसे बड़ी ज़रूरत यह है कि ख़तरों को सामने लाया जाए और उनसे बचने के उपाय किये जाएं। बुराइयों को दूर करने की कोशिश की जाए और कम से कम बुराइयों को बुरा कहा जाए।

स्वतन्त्रता दिवस का यह संदेश पूरे देश के लिये है। लोगों को वास्तविक आज़ादी मिले। उनके ज़मीर जागें। मन की बात कहने का अधिकार सबको हो और साफ़ मन के साथ मानवता का दर्द लेकर यह देश आगे बढ़े। प्रकृति ने इसे तरह–तरह के ख़ज़ानों से मालामाल किया है। इसकी सबसे बड़ी दौलत मुहब्बत है जो इसकी प्रकृति में है, मानवप्रेम है, जिसकी घटनाएं देश के इतिहास का रोशन अध्याय है। इसे हर क़ीमत पर बाक़ी रखना है, ताकि यह देश उस मार्ग से हटने न पाए जिसपर उसको आज़ादी दिलाने वालों व आज़ादी की राह में ख़ून का आख़िरी क़तरा तक बहाने वालों ने डाला था।

अल्लाह की मुहब्बत

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

हदीसः हज़रत अबूहुरैरा (रज़ि0) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स0अ0) ने फ़रमायाः अल्लाह तआला क़यामत के दिन फ़रमाएगा मेरी अज़मत व बड़ाई की वजह से जो आपस में मुहब्बत करते थे वे कहां हैं, आज मैं उनपर अपना साया करूंगा और मेरे साये के अलावा और कोई साया नहीं।

फ़ायदाः अल्लाह तआला ने हर इन्सान में स्वाभाविक रूप से मुहब्बत का उन्सुर रखा है, लेकिन इस मुहब्बत का महल क्या है?इसके लिए अल्लाह तआला ने अक़्ल की सलाहियत से भी नवाज़ा है। ताकि इन्सान अक़्ल की मदद से इस अहम व हस्सास उन्सुर को सही महल पर लगा सके। मुहब्बत एक ऐसी चीज़ है जो इन्सान के लिए सख़्त से सख़्त मराहिल को बहुत ही आसान बना देती है, हर मुश्किल उसके सामने हैच हो जाती है। अगर यह मुहब्बत किसी इन्सान से हो तो उसकी हर नक़ल व हरकत हद दरजा महबूब हो जाती है, उसकी इत्तिबा में जी लगने लगता है, अगर यही मुहब्बत किसी मादरी चीज़ से हो जिससे दुनिया के मुनाफ़े का हुसूल वाबस्ता हो, तो इन्सान उसीकी तग व दू में रहता है, फिर उसकी मुहब्बत के आगे वह अपनी अज़ीज से अज़ीज़ चीज़ की भी परवाह नहीं करता है।

कुरआन मजीद और हदीस नबवी (स0अ0) में कई जगह पर ईमान वालों से मुतालबा किया यगा है कि मुहब्बत सिर्फ़ और सिर्फ़ अल्लाह और उसके रसूल (स0अ0) से होनी चाहिए। एक जगह ईमान वालों का शेआर बताते हुए अल्लाह का इरशाद हैः "और जो लोग ईमान लाए वे अल्लाह ही से सबसे ज़्यादा मुहब्बत रखने वाले हैं।" (सूरह बक़राः 165) यह अक़्ल का तक़ाज़ा भी है कि अस्ल मुहब्बत अल्लाह से की जाए, क्योंकीवही अकेली ज़ात है जिसके एहसान और नेमतों का हक़ कोई अदा नहीं कर सकता, वही सबका ख़ालिक़ व मालिक और राज़िक़ है और सबको उनके आमाल की जज़ा देने वाला है।

अल्लाह की मुहब्बत का फ़ायदा यह है कि इन्सान के लिए दीनी कामों पर अमल करना आसान हो जाता है। अगर मुहब्बत का जज़्बा मौजूद हो तो दीनी आमाल अन्दरून के जज़्बे से अदा होते हैं, और जिस दर्जे उसमें कमी वाक़ेअ होती है, उस दर्जे बातिनी कैफ़ियात का फ़ुक़दान होता है, अगर दिल में मुहब्बते इलाही का दर्जा है तो फिर गर्मी का रोज़ा हो या सर्दी की नमाज़ या कसीर माल की ज़कात निकालने का मसला हो, या बैतुल्लाह का हज हो, एक साहबे ईमान के लिए कोई भी काम मुश्किल नहीं है। बल्कि यह सारे आमाल उसकी तबियत को मज़ीद मुन्शरह करने वाले हैं।

सहाबा किराम (रज़ि0) इसका आला मेयार हैं। यही वजह है कि उनके लिए ख़ुदा की मुहब्बत के सामने हर चीज़ बेमाया थी। यही वह जौहर था जिसकी बिना पर वे ख़ुदा के लिए रेगिस्तान की तपती हुई रेत पर लिटाए जाते, ज़ालिमों की कड़वी–कसीली सुनते, उनके ऊपर गन्दिगयां फेंकी जाती, अलग–अलग तरह से ज़द व कूब किया जाता, मगर उनके ईमान पर ज़र्रा बराबर लग़ज़िश न आती, क्योंकि उनको मुहब्बत का वह अक्सीर मिल चुका था जिसके बाद हर मुसीबत व सख़्ती बेहैसियत हो जाती है।

मौजूदा दौर में मुसलमानों की ख़स्ताहाली का एक बड़ा कारण ख़ुदा से मुहब्बत की कमी भी है। इस वक़्त अक्सरियत ऐसी है जिसके दिल ख़ुदा की मुहब्बत से ख़ाली हैं। उनकी मुहब्बत का केन्द्र फ़िल्मी अदाकार हैं या दुनिया की रोज़ी–रोटी में वे मस्त हैं। आख़िरत की उन्हें कोई फ़िक्र नहीं। बहैसियत हक़ीक़ी रब के उनके ज़हन में यह ख़्याल ही नहीं आता कि अस्ल मुहब्बत की मुस्तहिक़ ज़ात सिर्फ़ अल्लाह तआला की है। यही कारण है कि हर तरफ़ बेदारी का नारा लगाया जा रहा है। हर सतह पर इस्लाहे मुआशिरा की कोशिश हो रहीं हैं, मगर उनका वह ख़ातिर ख़्वाह नतीजा सामने नहीं आ रहा है जिसका मुतालिबा है, क्योंकि आज मुस्लिम अक्सरियत के दिलों का मरकज़ ऐसे लोगों की मुहब्बत हो गयी है जो बजाए ख़ुद क़ाबिले रहम हैं।

मुहब्बत के सिलसिले में उप्रोक्त हदीस से मालूम होता है कि मुहब्बत का अस्ल महल ख़ुदा है। अगर दुनिया में भी किसी से मुहब्बत की जाए तो उसी के लिये, किसी से गुस्सा हो तो उसी के लिए, ग़रज़ कि जो भी काम हो हर काम में उसकी मुहब्बत का अन्सर शामिल हो, तो जब क़यामत के दिन कोई साया न होगा अल्लाह तआला अपने फ़ज़ल व करम से उस वक़्त साया अता फ़रमाएगा।

वर्तमान समय में मुसलमान क्या करें?

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से देश के विभिन्न क्षेत्रों में गंभीर फ़साद हए। जान व माल का अत्यधिक नुक़सान हुआ। गुजरात दंगों ने तो हैवानियत की सारी हदें ही पार कर दीं। दलील व सुबूत व गवाह हैं कि यह सारे दंगे बहुत ही व्यवस्थित रूप से और सरकार के संरक्षण में ही होते हैं जो निसंदेह भारत के माथे पर एक बदनुमा दाग़ है। फिर भी यह दंगे कुछ समय के लिये थे और देश के अलग–अलग क्षेत्रों में घटित हुए, इसलिए जल्द ही मुस्लिम क़ौम उस सदमें से बाहर निकल आयी। लेकिन वर्तमान परिस्थितियां पहले के मुक़ाबले अधिक गंभीर और चिन्ताजनक हैं। इस समय सामप्रदायिकता, उग्रवाद और नफ़रत की राजनीति को धर्म के नाम पर न केवल बढ़ावा दिया जा रहा है बल्कि लोगों के स्वभाव में यह बात दाख़िल की जा रही है। जिसके लिये उग्रवादी संस्थाएं पूरी स्वतन्त्रता के साथ कार्य कर रही हैं। ऐसे में देश का कोई क्षेत्र और कोई वर्ग सुरक्षित नहीं है। अल्पसंख्यक परेशान हैं और मुस्लिम समुदाय अत्यधिक चिन्ता में है और अपने भविष्य को लेकर आशंकित है। निसंदेह ऐसी स्थिति का पैदा होना स्वाभाविक है लेकिन किसी भी परिस्थिति में मायूस होना और ठोस कार्यप्रणाली से ग़फ़लत बरतना ईमानवालों के लिये शोभा नहीं देता।

हालात का जायज़ा करने पर पता चलता है कि इस चिन्ताजनक स्थिति के विभिन्न कारणों में एक बुनियादी ग़लती ख़ुद मुसलमानों की है। मुसलमानों ने अपने से होने वाले फ़ायदे को न केवल समाप्त कर दिया बल्कि वे यहां की मूर्तिपूजा करने वाली व बहुदेववादी आस्था रखने वाले समुदाय में बिल्कुल घुलमिल गये और अपनी सामुदायिक विशेषता और धार्मिक श्रेष्ठता को ही भुला दिया। मुसलमान और ग़ैर मुस्लिम में कोई अन्तर शेष न रहा। जीवन के सारे भागों से इस्लामिक आत्मा निकलती चली गयी जिसका परिणाम यह हुआ कि मुसलमान और मुश्किर के मध्य व्यवहारिक व सामाजिक सारे अन्तर समाप्त हो गये। परिणामस्वरुप मुसलमान इस हद तक कमज़ोर हो गये कि उनकी हैसियत सियासी मोहरों से ज़्यादा न बची जिन्हें राजनीतिक पार्टियों ने अपने–अपने हित साधने के लिये भरपूर इस्तेमाल किया।

वर्तमान परिस्थिति में ख़ुश करने वाली बात यह है कि देश का एक बहुत बड़ा वर्ग अब भी धर्मनिरपेक्ष आधारों पर विश्वास रखता है, वह देश व उसकी गंगा–जमुनी सभ्यता की सुरक्षा के लिये चिन्ता भी कर रहा है। ऐसे हालात में मुसलमानों की बुनियादी ज़िम्मेदारी है कि वे अपने गुणों को साबित करें। इस्लाम की सत्यता और इसकी श्रेष्ठ शिक्षाओं से दूसरों को परिचित कराएं। आपसी मेल–जोल, व्यापारिक लेन–देन, सफ़र व हज़र, विभिन्न आयोजनों व घटनाओं बल्कि जीवन के हर भाग में ऐसा श्रेष्ठ नमूना पेश करें कि नफ़रत की दीवारें ख़ुद ब ख़ुद ढा जाएं और धर्म के नाम पर जो खाई बनायी जा रही है वह समाप्त हो जाए। और उसके लिये किसी भी आंदोलन, संगठन या संस्था से संबंध की कोई शर्त नहीं। हर व्यक्ति अपनी–अपनी सतह पर इसे आरम्भ करे। वह ख़ुद को दूसरों के लिये फ़ायदेमन्द मुसलमान साबित करे, फिर वह ख़ुद ही उसके बेहतरीन नतीजों को देखेगा। यही तरीक़ा है इस देश में मुसलमानों की सामुदायिक विशेषता और धार्मिक श्रेष्ठता के साथ बाक़ी रहने का। इसके अलावा अगर कोई तरीक़ा अपनाया गया जिसका आधार भावनाओं पर या राजनीतिक दावों पर होगा तो शायद हालात में बदलाव और क़ुर्बानियां मांगेगे। वल्लाहु आलम

हज़रत अबू बसीर का नमूना

अबुल अब्बास ख़ाँ

हिजरत के छठे साल रसूलुल्लाह (स0अ0) ने एक ख़्वाब देखा कि आप (स0अ0) अपने असहाब (सहचरों) के साथ मक्का मुकर्रमा में दाख़िल हुए और अल्लाह के घर का तवाफ़ कर रहे हैं। यह ख़्वाब सुनते ही सहाबा किराम के दिलों में अल्लाह के घर की मुहब्बत और शौक़ की दबी हुई चिन्गारी भड़क उठी। यद्यपि मक्का की तपती व सुलगती हुई रेत में उन्हें तड़पाया गया था। सख़्त से सख़्त तकलीफ़ें दी गईं थीं। घर–बार छोड़कर हिजरत करने पर मजबूर किया गया था। लेकिन ख़ाना–ए–काबा की मुहब्बत उनके दिलों में एक फांस की तरह चुभी हुई थी जिससे फ़ुरक़त व महजूरी के जज़्बात रिसा करते थे।

लगभग चौदह सौ जाँनिसार रसूलुल्लाह (स0अ0) के साथ रवाना हुए। मंज़िल मक्का मुकर्रमा थी और मक़सद सिर्फ़ अल्लाह के घर की ज़ियारत (दर्शन) और उमरा था। कोई हथियार पास न था सिवाए उस तलवार के जो सफ़र का अनिवार्य हिस्सा थी और वह भी म्यान में। कुर्बानी के जानवर साथ थे। गले में नाल पड़े थे जो कुर्बानी की अलामत थी।

मक्का के कुरैशों को ख़बर हुई। वे जंग के जोश से भर गये। समझ गये कि जंग यक़ीनी है। सरगर्मियां बढ़ गईं। कुछ छेड़छाड़ भी शुरू हुई लेकिन नबी–ए–रहमत ने कहला भेजा कि जंगों ने कुरैश की हालत तबाह कर रखी है, अब बेहतर होगा कि कुछ समय के लिये सुलह कर लें। अगर यह मंजूर नहीं तो मैं आख़िरी सांस तक जंग के लिये तैयार हूं। कुरैश के होशमंदो व सूझबूझ रखने वालों ने इसी में आफ़ियत समझी और आपसी बातचीत के बाद सुलह मंजूर हुई।

सुहैल बिन अम्र कुरैश का नुमाइन्दा था। सुलह की दफ़ाएं लिखी जाने लगीं। एक दफ़ा यह भी थी कि मक्का का कोई मुसलमान अपने वली (संरक्षक) की मर्ज़ी के बिना रसूलुल्लाह (स0अ0) के पास आयेगा तो वापस कर दिया जाएगा। लेकिन मदीना से कोई मक्का आयेगा तो वापस नहीं किया जाएगा। यह दफ़ा खुले तौर पर ज़्यादती और मनमानी थी। संयोग की बात सुलहनामा लिखा जा ही रहा था कि खुद सुहैल बिन अम्र के बेटे अबू जन्दल (रज़ि0) वहां आ पहुंचे। पांव में बेड़ियां, बदन पर ज़ख़्मों के निशान, लड़खड़ाते संभलते सहाबा के सामने गिर पड़े, मुद्दतों से कुरैश की क़ैद में थे और अपने इस्लाम की क़ीमत चुका रहे थे। सुहैल ने कहा कि सुलह की पूर्ति का यह पहला मौक़ा है, उन्हें हमारे हवाले कर दो। रसूलुल्लाह (स0अ0) ने कहा कि अभी सुलह पूरी नहीं हुई है। उन्हें यहीं रहने दो। सुहैल ने एक न मानी। आप ने कई दफ़ा कहा तो उसने कहा कि फिर हमें सुलह मंजूर नहीं। मजबूरी में रसूलुल्लाह (स0अ0) को उसकी बात माननी पड़ी और अबू जन्दल (रज़ि0) को उनके हवाले कर दिया गया।

कुरैश की क़ैद से बचना आसान न था। अबू जन्दल (रज़ि0) जान पर खेलकर आये थे। ज़ख़्मों से चूर बचते–भागते निढाल थे। दर्द के साथ पुकार उठे कि ऐ मुसलमानों! मेरे ज़ख़्मों को देखो, मेरी हालत को देखो, क्या तुम मुझे इसी हाल में देखना चाहते हो?क्या तुम मुझे फिर काफ़िरों के हवाले करते हो?! मुसलमान तड़प उठे। तलवारें खिंच ही जातीं, ख़ून की नदियां बह ही जातीं लेकिन संधि हो चुकी थी। मुसलमानों ने दिल पर पत्थर रख लिया था। यह सुलह हर हाल में ज़रूरी थी। यह एक क्रान्तिकारी सुलह थी। फ़तेह मक्का का पेशखेमा और दुनिया पर फ़तेह का दीबाचा थी।

अबू जन्दल (रज़ि0) को बेड़ियों में जकड़ा गया। वे चीख़ते–चिल्लाते रहे। लेकिन उनकी आवाज़ हुदैबिया की वादी में गूंज कर ख़ामोश हो गयी। सिसकियों और हिचकियों की सौग़ात लिये बोझिल क़दमों के साथ वे मक्का से रवाना हुए। दिमाग़ में मक्का का क़ैदख़ाना घूमने लगा। वहां की सख़्तिया निगाहों के सामने घूमने लगीं। आख़िरकार ईमानी कूव्वत ने बदन में गर्मी पैदा की। वे मौक़े की तलाश में रहे। सफ़र लम्बा और रास्ता टेढ़ा था। इत्तिफ़ाक़ की बात कुफ़्फ़ार की गिरफ़्त कुछ ढीली हुई और अबू जन्दल ने अपना पैदाइशी हक़ हासिल किया और आज़ाद फ़िज़ाओं में अहले मक्का और अहले मदीना वालों की पकड़ से रोपोश हो गये।

सुलह हुदैबिया के अभी कुछ दिन भी न गुज़रे थे कि मक्का का क़ैदख़ाना एक बार फिर टूटा और एक नये क़ैदी ने आज़ाद फ़िज़ाओं में सांस लेने का ऐलान कर दिया। यह सहाबी हज़रत अबू बसीर (रज़ि0) थे। आज़ाद होते ही वे मदीना पहुंचे और रसूलुल्लाह (स0अ0) की ख़िदमत में हाज़िर हुए। मक्का के मुश्रिकों को ख़बर हुई। फ़ौरन अपने हरकारे दौड़ाए। उन्होंने रसूलुल्लाह (स0अ0) को हुदैबिया की संधि

याद दिलायी और अबू बसीर की वापसी की मांग की।

अबू बसीर कांप उठे, यह कैसी मांग है?यहां पनाह नहीं मिलेगी तो कहां मिलेगी?मुसलमान सहारा नहीं देंगे तो कौन देगा?! बेशक अबू बसीर कमज़ोर नहीं थे। वे कुफ़्फ़ार की सख़्तियों से टूटे नहीं थे। उन्हें मालूम था कि इस्लाम की क़ीमत हर हाल में चुकानी है। लेकिन वे ईमान का सौदा नहीं कर सकते थे। कुफ़्फ़ार उनके ईमान पर डाका डालने की कोशिश करते थे। उन्होंने सारी उम्मीदों के साथ कहाः "ऐ अल्लाह के रसूल! मुझे उन मुश्रिकों के पास भेजते हैं जो मुझे दीन से फेरना चाहते हैं।"

एक बार फिर मुसलमानों का वजूद तड़प उठा। एक बार फिर तलवारें म्यान से बाहर निकलने को मचल उठीं। एक बार फिर ज़ब्त व बर्दाश्त की सारी हदें मिटने को बेताब हो गयीं, लेकिन रसूल का फ़रमान सबसे ऊंचा है। उसके सामने सारी आरज़ुएं, ख़्वाहिशें, तमन्नाएं और सारी याचनाए ख़स व ख़ाशाक से भी कमतर हैं। सुलह की पाबन्दी की गयी। अबू बसीर को मुश्रिकों के हवाले कर दिया गया और सहाबा किराम अपने भाई की मज़लूमियत, उसकी बेबसी व लाचारगी पर ख़ामोश ख़ुदा से फ़रियादी रहे।

मुश्रिकीन अबू बसीर को लेकर रवाना हुए। वे केवल दो ही थे। रास्ते में पड़ाव डाला। अबूबसीर (रज़ि0) ने एक से कहा कि तुम्हारी तलवारें बहुत उम्दा मालूम होती हैं। यक़ीनन यह बहुत क़ीमती होंगी। तुमने बड़े जौहर दिखाए होंगे। अपनी तारीफ़ सुनकर वह शेख़ी में आ गया। तलवार लहराते हुए कहा कि ख़ुदा की क़सम यह बहुत ही उम्दा तलवार है। मैंने कई बार इसको आज़माया है। अबूबसीर ने कहा कि ज़रा मुझको भी दिखलाओ। अंजाम से ग़ाफ़िल, अपनी बदबख़्तियों से बेपरवाह उस शख़्स ने तलवार अबू बसीर को थमा दी और फिर दूसरे ही लम्हे वह तलवार आसमान में चमकी और पलक झपकते हुए उस मुश्रिक का काम तमाम कर गयी। यह मंज़र देखकर दूसरे शख़्स के होश उड़ गये। जानबचाकर भागा और सीधे मदीना पहुंच कर दम लिया। रसूलुल्लाह (स0अ0) से माजरा बयान करते हुए कहा कि हुज़ूर मेरा साथी तो मारा गया। अब मेरी बारी है, ख़ुदारा मुझे बचा लीजिए। पीछे अबू बसीर भी आ पहुंचे, कहाः हुज़ूर आपने मुझे वापस कर दिया था, आपने अपना वादा पूरा किया, मेरा उनसे कोई मुआहिदा नहीं, अब मैं आज़ाद हूं, बिल्कुल आज़ाद!

मक्का में मुसलमानों की हालत ख़राब थी। रोज़ नयी ज़्यादतियां होती थीं। रस्सियों में बांधे जाते, गलियों में घसीटे जाते, पत्थर मारे जाते, सर फोड़ दिये जाते, तपती रेत पर रगड़े जाते, भारी पत्थरों से दबाए जाते। वे सिर्फ़ अल्लाह–अल्लाह करते और पड़े रहते, कोई सहारा न था, मक्का में जीना मुश्किल था, और मदीना की राहों को मुआहिदे की शर्तों ने बंद कर रखा था, लेकिन जल्द ही उन्हें यह ख़ुश करने वाली ख़बर भी पहुंच गयी कि बेकस व सितम रसीदा लोगों के लिये अबूबसीर एक मज़बूत पुश्तपनाह हैं।

अबू बसीर (रज़ि0) ने समन्दर के किनारे पनाह ली। जल्द ही अबूजन्दल भी उनके पास आ पहुंचे। एक दूसरे का सहारा बन गये और फिर एक सिलसिला शुरू हुआ मक्का के क़ैदख़ानों को तोड़ने का। कभी एक तो कभी दो तो कभी कई–कई मुस्लिम क़ैदी फ़रार होते। मक्का के मुश्रिकों से बचते–बचाते अबूबसीर (रज़ि0) की पनाह में आ जाते। इसी तरह देखते–देखते सत्तर लोगों की एक मज़बूत जमाअत तैयार हो गयी।

समन्दर के किनारे से मक्का वालों के तिजारती काफ़िले गुज़रा करते थे। तिजारत के मुनाफ़े को मुसलमानों के ख़िलाफ़ भी इस्तेमाल किया जाता था। अबू बसीर और उनके साथी उन क़ाफ़िलों को रोकते, उनके माल पर क़ब्ज़ा करते और ज़रूरत पड़ने पर उन्हें सबक़ भी सिखाते।

कुछ ही दिनों में मक्का वालों के होश ठिकाने लगे। वे ख़ुद रसूलुल्लाह (स0अ0) की ख़िदमत में हाज़िर हुए। कहने लगे कि हम अपनी शर्तों से बाज़ आए। आप उन्हें अपने पास बुला लीजिए। मुआहिदे की इस शर्त को हम ख़ुद ख़ारिज करते हैं। अब मक्का का कोई भी मुसलमान आपके पास आना चाहे तो उसे अख़्तियार है। रसूलुल्लाह (स0अ0) ने ख़त लिखकर अपना दूत रवाना किया। अबू बसीर (रज़ि0) की ज़िन्दगी के आख़िरी लम्हात थे, ख़त मुबारक को अपने सीने से लगाया और दुनिया से रुख़सत हो गये। बाक़ी असहाब मदीना मुनव्वरा आ गये।

इसमें कोई शक नहीं है कि सीरते नबविया का हर पहलू एक मुकम्मल नमूना है। सहाबा किराम की ज़िन्दगी का हर हिस्सा क़ाबिल–ए–तक़लीद है। हज़रत अबू बसीर का तरीक़ा ही आज वक़्त की एक अहम ज़रूरत और एक ज़रूरी नमूना है। हम यह नहीं कहते हैं कि सभी मुसलमान हज़रत अबू बसीर को नमूना बना लें लेकिन एक जमाअत ऐसी ज़रूर होनी चाहिये जो हज़रब अबू बसीर के मिटते हुए नमूने को ज़िन्दा रखे। जो मज़लूम मुसलमानों के लिये मज़बूत पुश्तपनाह हो। जो ज़ालिमों को उनके मज़ालिम की संगीनी से परिचित कराकर अमन की फ़िज़ा क़ायम कर सके।

दरूद व सलाम

मोहसिन–ए–आलम सरवर–ए–कायनात हुज़ूर पुर नूर सैय्यदना व मौलाना मुहम्मद स०अ० फ़दाह अबी व उम्मी जिनकी तौसीफ़ व तारीफ़ का कोई ज़बान व कोई इल्म हक़ नहीं अदा कर सकता, और आख़िरी बात हज़रत हस्सान बिन साबित रज़ि० जो आप स०अ० के शाएर–ए–मेम्बर भी थे और सहाबी भी, इन अश्आर में कह दी:

"आप स०अ० से ज़्यादा बेहतर मेरी आंखों ने नहीं देखा, और आप स०अ० से ज़्यादा हसीन व जमील किसी को भी औरतों ने नहीं जना, आप स०अ० पैदा हुए तो इस हाल में कि आप स०अ० में किसी तरह का ऐब और ख़ामी न थी, गोया आप स०अ० अपनी पसंद के मुताबिक़ पैदा हुए।"

उस ज़ाते गिरामी का वस्फ़ और यह गुनाहगार क़लम, आप स०अ० का नामे नामी और यह गन्दी ज़बान, दोनों में क्या निसबत।

वह रिसालते माब और शहे दो जहां।
पाक नाम आप स०अ० का ले यह गन्दी ज़बान।।
है मजाल इसकी क्या और जुर्रत कहां।
एक ख़्याल आ गया और आंसू रवां।।
सैयद वल्दे आदम वह ख़ैरुल अनाम।
आप पर मेरे लाखों दरूद व सलाम।।

लेकिन ज़बान की ख़ूबियों में एक मायानाज़ ख़ूबी आप स०अ० के नामे नामी को सुनकर या बिना सुने दरूद शरीफ़ का पढ़ना और उसका विर्द रखना है। इसीलिए उसके आदाब, औक़ात और चन्द फ़ज़ाएल का ज़िक्र किया जाता है। वह ज़बान बड़ी बदनसीब है जो दरूद शरीफ़ से महरूम रहे। वह शख़्स बड़ा नामुराद है, जिसकी ज़बान पर दरूदशरीफ़ के अल्फ़ाज़ न आएं।

मौलाना मुहम्मद सानी हसनी रह०

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Postal Reg. No.
RBL/NP -19

Issue: 08 | AUGUST 2017 | VOLUME: 09

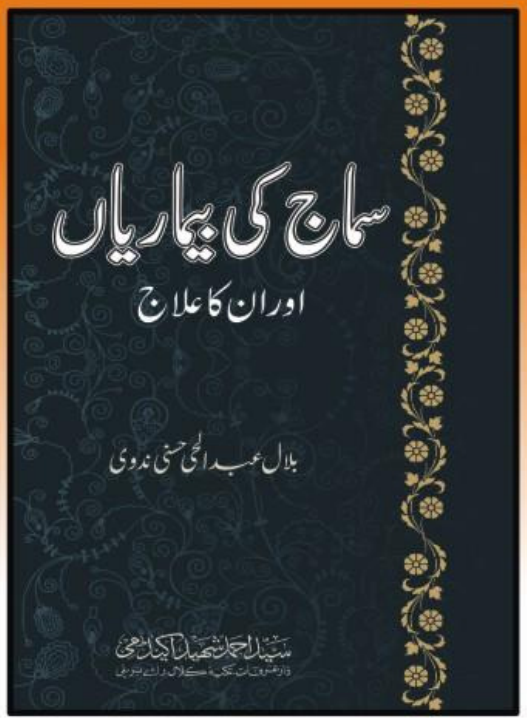

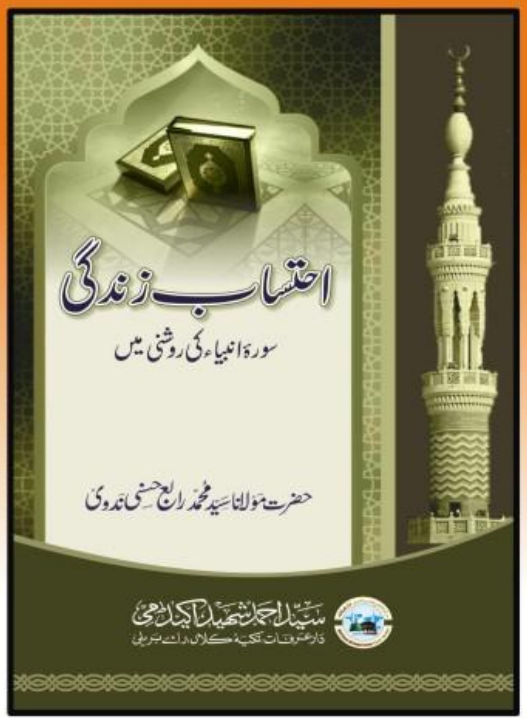

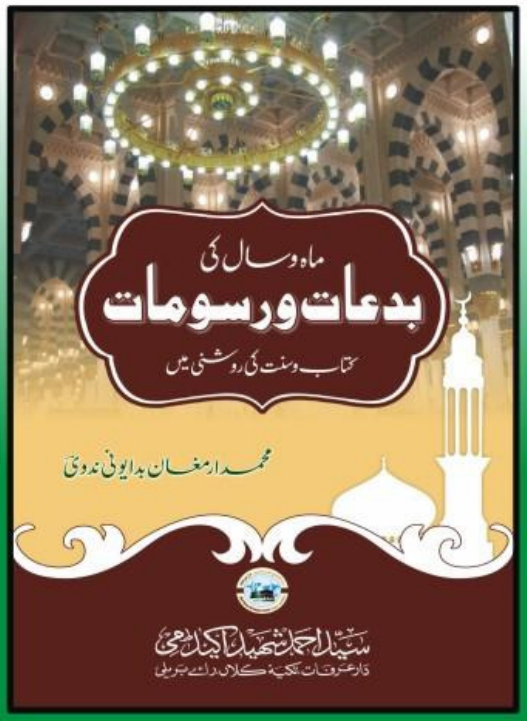

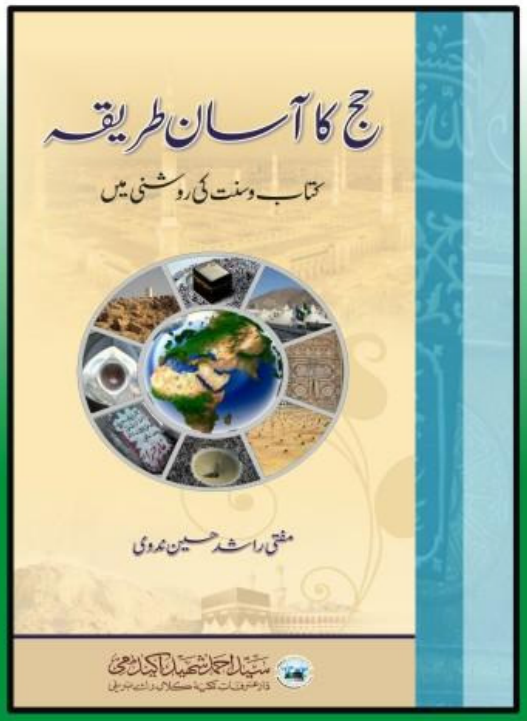

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.